# गुरु-प्रसाद

मई 2014
मूल्य ₹ 10

मासिक पत्रिका, गीता आश्रम, दिल्ली कैन्ट

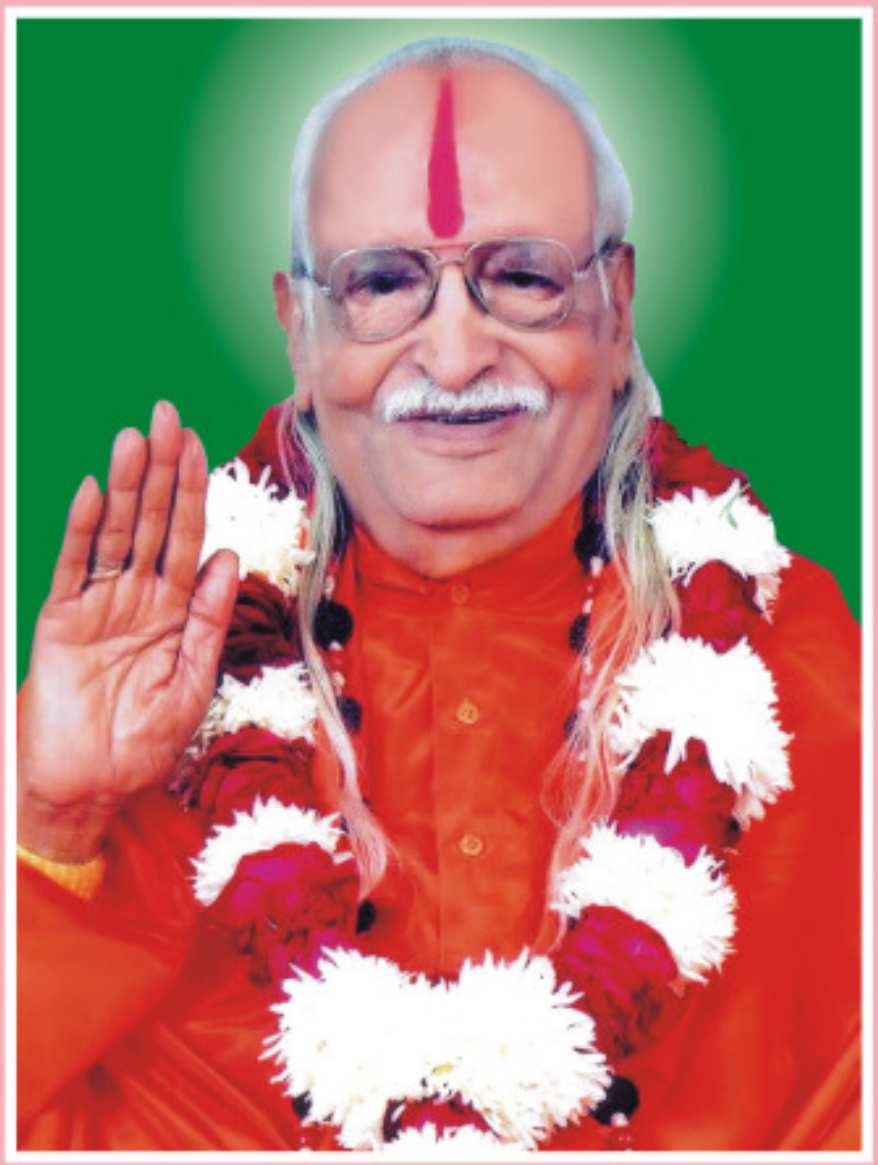

परम पूज्य श्री १००८ स्वामी हरिहर जी महाराज

वर्ष 54 | गुरु प्रसाद - मई 2014 | अंक 05

# शुभ चिंतन

चिंतन विकसित मस्तिष्क की सहज प्रक्रिया है। जहां चिंतन है वहीं विचार है, वैचारिक दर्शन है। चिंतन एक प्रकार का मंथन है। यदि चिंतन शुभ और गहन है, तो मंथन अमृतदायी है और यदि सतही है, तो विष उत्पादक है। समुद्र मंथन से भी पहले प्राणहर विष ही प्राप्त हुआ था, कारण वह सतही मंथन था। जब सुरों-असरों ने गंभीर होकर गहन मंथन किया, तो उन्हें अमरता प्रदान करने वाला अमृत लाभ हुआ। चिंतन वही शुभकारी होता है, जो अमृतदायी हो। अशुभ चिंतन का यहां विष तो बहुत है, पर विषपायी कोई नहीं है। हमें विषपान से बचने के लिए चिंतन को शुभ रखना ही होगा। उदाहरणार्थ सूर्य पूर्व में उगता है, प्रकाश फैलाता है और सायं अस्त हो जाता है और हमें अंधकार के महाकूप में डुबो जाता है। यह बात सच नहीं है बल्कि हमारा दृष्टिभ्रम है। सूर्य न तो उगता है और न अस्त होता है। पृथ्वी ही उसकी परिक्रमा करती है। पृथ्वी की यह परिक्रमा और परिभ्रमण ही हमें भ्रमित करता है और यही भ्रम हमारे चिंतन को दूषित भी। यह दूषित चिंतन डूबते सूर्य के सदृश हमें भी अवसादों के अंधकार में डुबोता रहता है। सूर्य और आत्मा, दोनों ही शाश्वत हैं। पृथ्वी और तन दोनों ही क्षरणशील, नश्वर और मायाग्रस्त हैं, लेकिन हमारा गलत या असंतुलित चिंतन इसके उलट सूर्य को गतिशील और पृथ्वी को स्थिर मानता है। तभी तो वह सूर्योदय और सूर्यास्त जैसे भ्रामक शब्द गढ़ता और उन्हें दूसरों को भी स्वीकार कराने का यत्न करता है।

सूर्य का उदाहरण सामने रख आत्मा की अक्षरता, अजरता और अमरता का हम निरंतर शुभ चिंतन करें, पृथ्वी की तरह शरीर को स्थिर मानकर स्वयं को भ्रमित न करें। दूसरों को भुलावे में रखकर हम भले ही किसी तथाकल्पित लाभ की बगिया मन में उगा लें, किंतु स्वयं को भुलावे में रखना सजी संवरी बगिया को उजाड़ना ही है। पात्र को आधा रिक्त समझने वाला चिंतन कभी शुभ नहीं होता है। वह तनाव, अवसाद और निराशाओं का जनक होता है। फूलों का मुरझाना, पत्तियों का झड़ना, सूरज का डूबना, खालीपन को महसूस करना आदि अशुभ चिंतन को त्यागकर हमें फूलों का खिलना, पत्तियों का पल्लवित होना, सूरज का निकलना, पूर्णता का आनंद लेना आदि के बारे में शुभ चिंतन करना चाहिए। यह शुभ चिंतन ही श्रेष्ठ और शुभ्र होता है।

**- स्वामी हरिहर जी महाराज**

# गुरु-प्रसाद

( मासिक पत्रिका )

वर्ष : 54 ◆ अंक : 05 ◆ मई 2014

संस्थापक :

श्री 1008 स्वामी हरिहर जी महाराज

●

संरक्षक :

स्वामी ब्रह्मानन्द जी

सर्वोच्च आध्यात्मिक प्रमुख

गीता आश्रम, दिल्ली कैन्ट, दिल्ली-110010

दूरभाष : 25694380 फैक्स : 25693316

**Website : www.geetaashram.net**

**E-mail Address :**

**guruji64@hotmail.com**

**geeta.ashrams@gmail.com**

●

एक प्रति : 10.00 रुपये

आजीवन सदस्यता : 1500 रुपये

●

*प्रधान सम्पादक :*

पण्डित गौरीदत्त शर्मा ( गीता रत्न )

●

*सम्पादक मण्डल :*

गुरु मां गीतेश्वरी ( गीता भास्कर )

गीता मातेश्वरी ( गीता भास्कर )

श्रीमती स्वर्ण अम्बो ( गीता रत्न, पुवानश्री )

श्री गोपी कृष्ण वातल

कृष्णा ( रेणु )


## एक ही दृष्टि में


| | |
|---|---|
| शुभ चिंतन | 3 |
| दिव्य प्रसाद | 5 |
| श्रीहनुमानचालीसा ( तात्त्विक विवेचन ) | 11 |
| 'सुख और शान्ति... गीता के द्वारा' | 15 |
| सम्पुट वल्ली पाठ | 18 |
| सर्वस्य चाहं | 19 |
| वसुदेव सुतं देवम् | 24 |
| सुख और शान्ति | 26 |
| रामः शस्त्रभृतामहम् | 29 |
| देवी भागवतः श्री जगदम्बिकायै नमः | 31 |
| सुख और शान्ति गीता के द्वारा | 33 |
| एकादश एवं द्वादश स्कन्ध की विवेचना | 35 |
| तुलसी : कुछ चिकित्सीय प्रयोग | 36 |
| आश्रम समाचार | 37 |
| राशिफल | 40 |
| व्रत एवं त्योहार सूची | 41 |



सम्पादक, मुद्रक, प्रकाशक आचार्य गौरीदत्त शर्मा द्वारा मैनेजमेंट कमेटी ऑफ गीता आश्रम, दिल्ली कैंट, नई दिल्ली-10, गीता आश्रम, सदर बाजार, दिल्ली कैंट, नई दिल्ली-10 के निमित्त गीता आश्रम प्रिन्टिंग प्रेस, गीता आश्रम, सदर बाजार, दिल्ली कैंट, नई दिल्ली-110010 से मुद्रित एवं प्रकाशित।

**Posted at NEW DELHI PSO, New Delhi-110002 on 2nd/3rd of each month.**

## ब्रह्मलीन स्वामी श्री 1008 हरिहर जी महाराज का

# दिव्य प्रसाद

### श्रीमद्भगवद्गीता के सप्तदश अध्याय के पञ्चदश श्लोक का अर्थ-निरूपण तथा व्याख्या

**श्लोक**

**अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।**
**स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते।।**

**श्रीमद्भगवद्गीता-१७/१५**

यत् = जो, अनुद्वेगकरम् = उद्वेग न करने वाला, सत्यम् = सत्य, च = और, प्रियहितं = प्रिय तथा हितकारक, वाक्यम् = भाषण है, (वह) च = तथा, स्वाध्यायाभ्यसनं = वेद, उपनिषद्, शास्त्र, पुराण, इतिहास आदि आध्यात्मिक-धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय एवं परमेश्वर के नाम जप आदि का अभ्यास है, चैव = वही, वाङ्मयम् = वाणी संबंधी, तपः = तप, उच्यते = कहा जाता है।

**'अनुद्वेगकरं वाक्यम्'–** जिस वाक्य से किसी का मन वर्तमान या भविष्य में तनिक भी उद्विग्न न हो तो उस वाक्य को 'अनुद्वेगकर' माना जाता है।

इसकी सिद्धि के लिये हमें पांच बातों का ध्यान रखना चाहिए। हमें सावधानी रखनी चाहिए– किससे बोलना है, किस विषय में बोलना है और कैसे, कब, कहां बोलना है। इस प्रकार का ध्यान रखने से हम 'अनुद्वेगकर' वचनों से बच सकते हैं। कहा गया है–

**परापवादं पैशुन्यमनृतं चैव न भाषते।**
**अनुद्वेगकरं चापि तुष्यते तेन केशवः।।**

जो दूसरों की निंदा, चुगली, मिथ्याभाषण नहीं करता तथा किसी को उद्वेग करने वाली बात भी नहीं करता, उससे भगवान् प्रसन्न रहते हैं।

श्री तुलसीदास जी कहते हैं–

**प्रसन्नतां या न गताभिषेकस्तथा**
**न मम्ले वनवासदुःखतः।**
**मुखाम्बुजश्री रघुनन्दनस्य मे**
**सदास्तु सा मञ्जुलमङ्गलप्रदा।।**

रघुकल को आनन्द देने वाले श्रीरामचन्द्र जी के मुखारविन्द की जो शोभा राज्याभिषेक से न तो प्रसन्नता को प्राप्त हुई और न वनवास के दुःख से मलिन ही हुई, मेरे लिये सदा सुंदर मंगलों की देने वाली हो। ऐसे भगवान् श्रीराम जब वनवास काल में महर्षि श्री वाल्मीकि जी के आश्रम में पहुंचते हैं तो उनसे वे विनम्र शब्दों में कहते हैं–

**देखि पाय मुनिराय तुम्हारे।**
**भए सुकृत सब सुफल हमारे।।**
**अब जहं राउर आयसु होई।**
**मुनि उदबेगु न पावै कोई।।**

**(मानस)**

हे मुनिराज! आपके चरणों का दर्शन करने से आज हमारे सब पुण्य सफल हो गये। अब जहां आपकी आज्ञा हो और जहां कोई भी मुनि उद्वेग को न प्राप्त हो, वहीं जाऊं।

**मुनि तापस जिन्ह के दुखु लहहीं।**
**ते नरेस बिनु पावक दहहीं।।**
**मंगल मूल बिप्र परितोषू।**
**दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू।।**

**(मानस)**

क्योंकि जिनसे तपस्वी दुःख पाते हैं, वे राजा बिना अग्नि के ही जलकर भस्म हो जाते हैं। ब्राह्मणों का संतोष सब मंगलों की जड़ है और भूदेव ब्राह्मणों का क्रोध करोड़ों कुलों को भस्म कर देता है।

**अस जियं जानि कहिअ सोइ ठाऊं।**
**सिय सौमित्रि सहित जहं जाऊं।।**

**(मानस)**

ऐसा हृदय में समझकर– वह स्थान बताइये जहां मैं लक्ष्मण और सीता सहित जाऊं और वहां सुंदर पत्तों और घास की कुटी बनाकर हे दयालु! कुछ समय निवास करूं।

भिन्न-भिन्न व्यक्तियों को भिन्न-भिन्न कारणों से उनके मन में उद्वेग, विक्षेप, हलचल हो सकता है। अपने मन के प्रतिकूल व्यक्ति, घटना, क्रिया कुछ भी हो तो सामान्यतया उद्वेग हो जाता है। परन्तु जो परमात्मा में ही पूर्णरूपेण समर्पित हो चुका है, सर्वत्र अपने परमात्मा को ही देखता है, उसके मन में सभी अनुकूल-प्रतिकूल देश, काल, परिस्थिति के कारण उद्वेग नहीं होता। वह अखण्ड, एकरस, सच्चिदानन्द परमात्मा में ही डूबा रहता है। वह नामों, रूपों, भावों, क्रियाओं में अपने परमात्मा का ही दर्शन करता है। भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं–

**यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।**
**तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति।।**

**(श्रीमद्भगवद्गीता-६/३०)**

जो पुरुष सम्पूर्ण भूतों में सबके आत्मरूप मुझ वासुदेव को ही व्यापक देखता है और सम्पूर्ण भूतों को मुझ वासुदेव के अन्तर्गत देखता है, उसके लिये मैं अदृश्य नहीं होता और वह मेरे लिये अदृश्य नहीं होता।

इस प्रकार ऐसे प्रभु भक्त के लिये कहीं भी, किसी से भी, किसी प्रकार भी उद्विग्न होने का प्रश्न ही नहीं होता। जैसे हिरण्यकशिपु द्वारा प्रह्लाद के ऊपर अनेक प्रकार के अत्याचार किये गये पर वे शान्त रहे, उद्विग्न नहीं हुए। भक्तिमती मीरा, तुकाराम जी महाराज, नरसीदास जी महाराज, कबीर, नानक, तुलसीदास जी, चैतन्य महाप्रभु, रामकृष्ण परमहंस आदि महापुरुष अनेक प्रकार के विघ्न-बाधाओं, विरोधों के होते हुए भी अविचल भाव से अपने साधना पथ में लगे रहे, कभी भी उद्वेग को प्राप्त नहीं हुए–

**निज प्रभुमय देखहिं जगत केहिसन करहिं बिरोध।**

**(मानस. उ. ११२-ख)**

श्री युधिष्ठिर जी महाराज के राजसूय यज्ञ में श्रीकृष्ण की अग्रपूजा का निश्चय हो जाने पर शिशुपाल ने भगवान् के ऊपर दोषारोपण करते हुए अपशब्दों की झड़ी लगा दी। भगवान् श्रीकृष्ण ने उसकी मां को उसके द्वारा सौ गालियां देने पर भी उसको क्षमा करने का वचन दिया था। अतएव जब सौ गालियां देकर उसने आगे बढ़ने का प्रयास किया तब भगवान् ने उद्विग्न हुए बिना, शान्त भाव से उसकी ग्रीवा काट दी और उसकी आत्मज्योति भगवान् श्रीकृष्ण के मुखारविन्द में प्रविष्ट हो गयी।

**सत्यं प्रियहितं च यत्–** जैसा देखा, सुना, पढ़ा, अनुभव करके निश्चय किया हो, किसी से

पहले कुछ कहा हो उसके पश्चात वैसा ही स्वीकार कर लेना, पंचायत-न्यायालय में साक्षी रूप में निःस्वार्थभाव से अभिमान, राग-द्वेष त्यागकर आवश्यकता पड़ने पर ज्यों का त्यों कह देना, 'सत्य' है।

गोस्वामी श्री तुलसीदास जी कहते हैं–

**धरमु न दूसर सत्य समाना।**
**आगम निगम पुरान बखाना।।**

**(मानस, दोहा-९५-३)**

वेद, शास्त्र, पुराण वर्णन करते हैं कि सत्य के समान कोई दूसरा धर्म नहीं है।

**सत्य बचन आधीनता परतिय मातु समान।**
**इतने में जो हरि ना मिलें तुलसीदास जमान।।**

सदा सत्य वचन के आधीन रहे और परायी नारी को माता के समान समझे। इतने में जो भगवान् न मिलें तो तुलसीदास जी उसकी जमानत लेने के लिये तैयार हैं।

सत्यव्रती राजा हरिश्चन्द्र जी ने स्वप्न में दिये गये दान की सत्यता की रक्षा के लिये महर्षि विश्वामित्र जी को अपना सम्पूर्ण राज्य दे दिया। महर्षि विश्वामित्र जी ने राज्य के दान की संहिता मांगी। तब राजा ने राजकोष से धन देना चाहा। विश्वामित्र ने कहा– यह तो सब कुछ आप दान कर चुके हैं। इससे आपका कुछ देना अनुचित होगा।

राजा हरिश्चन्द्र पत्नी शैव्या और पुत्र रोहिताश्व को लेकर काशी में आये और अपने को वहां के डोम राजा को बेच दिया। लेकिन उससे देय धनराशि पूरी नहीं हुई। तब राजा ने पत्नी शैव्या और बालक रोहिताश्व को एक ब्राह्मण को बेच दिया। अब पूरी देय धनराशि महर्षि विश्वामित्र को देकर प्रणाम किया।

एक दिन बालक रोहिताश्व अपने बालमित्रों के साथ जंगल में कुश-समिधा आदि लेने गया। वहां एक सर्प ने उसे काट लिया। मृतक पुत्र का शव लेकर शैव्या श्मशान घाट पर आयी। रात्रि में अंधकार में शैव्या ने राजा से पुत्र के दाह संस्कार की अनुमति मांगी। तभी आसमान में बिजली चमकी। राजा ने पुत्र के शव के साथ पत्नी शैव्या को पहचाना। उन्होंने कहा– डोम राजा की ओर से श्मशान घाट की रखवाली के लिये मैं नियुक्त किया गया हूं। तुम बिना कर दिये दाह संस्कार नहीं कर सकती हो। शैव्या ने अपनी साड़ी का एक भाग कर के रूप में देना स्वीकार किया।

ऐसी दुखद परिस्थिति, पति की कर्तव्यनिष्ठा, पत्नी का असहाय होना, साड़ी का एक भाग देकर पुत्र का दाह संस्कार स्वीकार करना, पृथ्वी-आकाश मूक करुण-क्रंदन से व्याप्त हो गया। जय हो, जय हो, जय हो, सत्यव्रती राजा हरिश्चन्द्र की जय हो– आकाश वाणी गूंज उठी, भगवान प्रकट हुए। तभी से कहावत चली आ रही है–

**चंद टरै सूरज टरै टरै जगत व्यवहार।**
**पै राजा हरिचंद को टरै न सत्य बिचार।।**

एक बार श्री रामकृष्ण परमहंस भगवती मां काली के मंदिर में गये और भाव विभोर होकर उनसे निवेदन करने लगे– मां! यह ले अपना धर्म, यह ले अपना अधर्म। यह ले अपना पाप, यह ले अपना पुण्य। यह ले अपना नरक, यह ले अपना स्वर्ग। इस तरह के द्वन्द्वों को समर्पित करते हुए यह ले अपना असत्य और वहीं रूक गये। वे यह ले अपना सत्य– यह नहीं कह सके।

सत्य गया तो सब गया। सारे धर्मों का सार है सत्य, सारे साधननाओं का सार है सत्य। सारे सम्प्रदाय, सारे मतों का सार है सत्य। सारे धर्म,

सम्प्रदाय, मत आदि जो भी कहे जाते हैं, वे सत्य के बिना रह नहीं सकते। भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं–

**नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।**
**उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः।।**
**(श्रीमद्भगवद्गीता-२/१६)**

असत् वस्तु की तो सत्ता नहीं है और सत् का अभाव नहीं है। इस प्रकार इन दोनों का ही तत्त्व तत्त्वज्ञानी पुरुषों द्वारा देखा गया है। सत् की सत्यता से ही असत्य की प्रतीति होती है–

**जासु सत्यता से जड़ माया।**
**भास सत्य इव मोह सहाया।।**
**(मानस, दोहा-११७-४)**

जिसकी सत्ता से मोह की सहायता पाकर जड़ माया भी सत्य-सी भासित होती है–

**सांच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप।**
**जाके हिरदे सांच है ताके हिरदे आप।।**

सत्य के बराबर कोई तपस्या नहीं, झूठ के बराबर कोई पाप नहीं। जिसके हृदय में सत्य का वास है, उसी के हृदय में आप अर्थात् परमात्मा प्रकट होते हैं।

**नहिं असत्य सम पातक पुंजा**
**गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा।।**
**(मानस)**

असत्य के समान पापों का समूह भी नहीं है। क्या करोड़ों घुंघुचियां मिलकर भी कहीं पहाड़ के समान हो सकती हैं। सत्य ही समस्त सुकृतों अर्थात् पुण्यों की जड़ है। यह बात वेद, पुराणों में प्रसिद्ध है। मनु जी ने कहा है–

**सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।**
**प्रियं च नानृतं ब्रूयादेव धर्मः सनातनः।।**
**(मनुस्मृति ४/१३८)**

मनुष्य को सत्य बोलना चाहिए और प्रिय बोलना चाहिए। उसमें भी सत्य हो, पर अप्रिय न हो और प्रिय हो, पर असत्य न हो– यही सनातन धर्म है।

सत्य के साथ वचन प्रिय भी होने चाहिये। जो कटु, कठोर, तीक्ष्ण न हों एवं रूखे, तानों, निन्दा, चुगली, अपमान, उपहास आदि भावों के दोषों से रहित हों, साथ ही प्रेम भरे, मीठे, सरल, शान्त हों तो ऐसे वचनों को प्रिय कहते हैं।

श्री तुलसीदास जी कहते हैं–

**तुलसी मीठे वचन से सुख उपजत चहुं ओर।**
**वशीकरण एक मन्त्र है तज दे वचन कठोर।।**

मीठे वचनों से चारों ओर सुख पैदा होता है। यदि किसी को वश में करना है तो कठोर वचनों का त्याग कर देना चाहिए।

एक बार काशी से पढ़कर दो मित्र वार्षिक अवकाश में अपने गांव जा रहे थे। अभी गांव दूर था। गर्मी पड़ रही थी। वे बहुत प्यासे थे। चलते-चलते एक गांव मिला। गांव से लगा हुआ एक कुआं दिखायी पड़ा। उसमें एक गृहणी पानी भर रही थी। दोनों कुएं के पास पहुंचे। एक मित्र ने उस गृहणी से कहा– माताजी मैं बहुत प्यासा हूं, पानी पिला दीजिये, बहुत कृपा होगी। उस महिला ने उसे पानी पिला दिया। वहीं दूसरा मित्र भी खड़ा था। उसने कहा– मेरे बाप की जोरू! मुझे भी पानी पिला दे। इतना सुनते ही उस महिला की भृकुटी तन गयीं और डंडा उठाकर मारने चली। यह है मीठा और कडुआ वचन का अन्तर।

श्री रहीम जी कहते हैं–

**खीरा को मुख काटि के मलियत नोन लगाय।**
**रहिमन कडुए मुखन को चहियत यही**

**सजाय।।**

लोग खीरा का मुख काटकर उसमें नमक लगाकर मलते हैं, जिससे उसकी कड़ुवाहट दूर हो जाती है। इसी प्रकार कड़ुए वचन बोलने वाले जो मुख हैं उनको ऐसी ही सजा मिलनी चाहिए।

विचार करने की बात है–

**प्रियवाक्यप्रदानेन सर्वं तुष्यन्ति जन्तवः।**
**तस्मात्तदेव वक्तव्यं वचने का दरिद्रता।।**

प्रिय वचन बोलने से मनुष्य, पशु, पक्षी आदि सम्पूर्ण प्राणी प्रसन्न हो जाते हैं, इसलिये मनुष्य को प्रिय वाक्य ही बोलना चाहिए। बोलने में दरिद्रता-कंजूसी किस बात की?

**हितं च–**

अपने से ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, पूज्य, माता-पिता, दादा-दादी, भाई-बहन, गुरुदेव, भगवान् के लिये जो किया जाता है– वह सेवा कही जाती है और वे जो अपने से छोटों के लिये, शिष्य, भक्त के लिये करते हैं– वह हित कहलाता है।

इसी प्रकार परब्रह्म परमात्मा के साथ एकीभाव को प्राप्त हुए महापुरुषों के लिये कहा गया है– **'सर्वभूतहिते रताः।' (गी.अ. १२/४)** चराचर समस्त प्राणियों के 'हित' में रत रहने वाले।

श्री हनुमान जी ने भगवान् श्रीराम जी के लिये जो कुछ किया वह सेवा थी। भगवान् श्रीराम जी ने हनुमान जी के लिये जो कुछ किया वह हित था।

सद्ग्रन्थों में कहीं-कहीं हित को प्रधानता दी गयी है, भले ही उसमें सत्य और प्रियता न हो। जैसे किसी व्यक्ति को किसी के हत्याकाण्ड में न रहते हुए भी, वैरभाव वश उसे उसमें फंसा दिया गया और हम इसे अच्छी प्रकार जानते हैं। अब न्यायालय में साक्षी रूप में असत्य बोलकर उसके जीवन की रक्षा कर लेते हैं। उसे मृत्युदंड से बचा लेते हैं तो यह असत्य भी सत्य के समान ही होगा।

एक कसाई गाय को लेकर जा रहा है। मार्ग में कसाई के हाथों से छूटकर गाय भागी चली आ रही है। दूसरी दिशा से आते हुए हमने उसे देख लिया। कुछ देर के पश्चात वह कसाई भी आता हुआ मिला, उसने हमसे गाय के विषय में पूछा। वह हमारे गांव का है। हम जानते हैं यह कसाई है। अतः गौ माता की रक्षा के लिये कहा– हमने तो कोई गाय नहीं देखी, हो सकता है कहीं दूसरी ओर चली गयी हो तो यह असत्य भी सत्य के समान ही कहा जायेगा।

एक विद्यार्थी है– झूठ बोलता है, चोरी करता है, सुरापान करता है, विद्यालय नहीं जाता। माता-पिता समझाते-समझाते थक जाते हैं। अन्त में कठोरता से काम लेते हैं। उसे डांटते हैं, दंड देते हैं और उसे सुधारते हैं तो यह अप्रिय कथनी-करनी भी प्रिय के समान ही मानी जायेगी।

अतएव सामान्यतया सत्य, प्रिय, हितकारी वचन ही सर्वोत्तम है पर कभी-कभी सत्य और प्रिय वचनों का प्रयोग न करके व्यक्ति के सुधार के लिये जिसमें उसका हित हो वैसा भी बोला जाये तो वह सत्य, प्रिय के समान ही होगा। जिस किसी दशा में वचन के द्वारा हित होना ही श्रेयस्कर है।

**स्वाध्यायाभ्यसनं चैव–** स्व कहते हैं- शरीर, आत्मा, परमात्मा को। भौतिक धरातल पर शरीर को 'स्व' कहते हैं। आगे गहराई पर जाइये तो आत्मा को 'स्व' कहते हैं और आगे जाइये तो परमात्मा को ही 'स्व' कहते हैं।

परमात्मा ही अपना वास्तविक मूल रूप है। उनको जानना, मानना, प्राप्त करना ही मानव जीवन का परम लक्ष्य है। हमने संसार का बहुत कुछ जाना, माना, प्राप्त किया परंतु यदि परमात्मा को नहीं जाना, नहीं माना, नहीं प्राप्त किया तो

सब कुछ व्यर्थ हो जाता है।

अतएव परमात्म संबंधी वेद, उपनिषद, इतिहास, पुराण, स्मृति का यथायोग्य पाठ करना, अध्ययन करना स्वाध्याय कहलाता है।

जो वेद-उपनिषद आदि को नहीं पढ़ सकते, वे गीता, बाल्मीकि रामायण, महाभारत, भागवत आदि का पाठ-अध्ययन करें तो उनका स्वाध्याय हो जायेगा।

यदि उनका भी पाठ-अध्ययन नहीं कर सकते तो श्रीरामचरितमानस, श्री हनुमानचालीसा आदि, संतों के चरित्र का ही पाठ-अध्ययन करें तो स्वाध्याय की पूर्ति हो जायेगी।

इन सद्ग्रन्थों को पढ़े-पढ़ावे, प्रचार करे तो और भी अच्छा है। यह सब स्वाध्याय ही कहा जायेगा। इससे भगवान् प्रसन्न होंगे और उनकी कृपा से उनको भगवान् की प्राप्ति भी हो जायेगी।

चौरासी लाख योनियों में मनुष्य ही ऐसा है जो सद्ग्रंथों का उपयोग कर सकता है। अन्य पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि कोई भी इनका स्वाध्याय करने में समर्थ नहीं है। अतएव मनुष्य के लिये नित्यकर्म का स्वाध्याय एक आवश्यक अंग माना गया है।

प्राचीनकाल में जब ऋषि आश्रमों में ब्रह्मचारी विद्या प्राप्त करके अपने घरों को जाते थे, तब ऋषि लोग अन्तिम आदेश देते थे– 'स्वाध्यायान्माप्रमदः' अर्थात् हे वत्स! स्वाध्याय में प्रमाद मत करना।

सद्ग्रन्थों की बार-बार आवृत्ति करना (दुहराना), उनकी पूर्णरूप से या उनके किन्हीं अंशों को कंठस्थ करना, भगवान् के नामों का जप करना, भगवान् के स्तोत्रों का गान करना आदि 'अभ्यसनम्' अर्थात् अभ्यास कहा जाता है।

श्रीमद्भागवत महापुराण में एक कथा आती है–

जब गजेन्द्र, उसका सारा परिवार, स्वजाति जन मिलकर भी गजेन्द्र को ग्राह से नहीं छुड़ा सके तब वह मन ही मन भगवान् की शरण में जाता है और अपने मन को अपने हृदय में एकाग्र कर फिर पूर्व जन्म में सीखे हुए उत्तम स्तोत्र का जप करता हुआ स्तुति करता है और भगवान् अविलम्ब वहां आकर अपने चक्र से ग्राह का मुंह फाड़कर उसकी रक्षा करते हैं। यह गजेन्द्र के पूर्वजन्म के अभ्यास का प्रभाव था। भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं–

**अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम्।**
**अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय।।**
**(श्रीमद्भगवद्गीता-१२/९)**

हे अर्जुन! यदि तू मन को मुझमें अचल स्थापन करने के लिये समर्थ नहीं है तो अभ्यास रूप योग के द्वारा मुझको प्राप्त होने के लिये इच्छा कर।

इस प्रकार भगवान् के नाम और गुणों का श्रवण, कीर्तन, मनन, श्वास के द्वारा जप और भगवत्प्राप्ति विषयक शास्त्रों का पठन इत्यादि चेष्टाएं भगवान् को पाने के लिये बारम्बार करने का नाम 'अभ्यासनम्' अभ्यास है।

'एव च' इन दो अव्यय पदों के प्रयोग का भाव है कि भगवान् की प्राप्ति में जो बाधक बने ऐसे मनुष्यों का संग, ऐसे साहित्य का पठन, दूसरों के दोषों का कहना-सुनना, निंदा-चुगली और व्यर्थ की बातों का त्याग करना चाहिये। कहा गया है–

**विषय भोग निद्रा हंसी जगत प्रीति बहुबात।**
**नारायण हरि भजन में ये पांचों ही न सुहात।।**

# श्रीहनुमानचालीसा

## ( तात्त्विक विवेचन )

● स्वामी ब्रह्मानन्द

**संकट कटै मिटै सब पीरा।**
**जो सुमिरै हनुमत बलबीरा।।**

**भावार्थ–** श्री हनुमान जी बलबीर अर्थात् शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आत्मिक समस्त बलों के वीर हैं। उनका जो स्मरण करता है, उसके संकट कट जाते हैं और उसकी सब प्रकार की पीड़ाएं दूर हो जाती हैं।

**व्याख्या–** बिना बल के सांसारिक या पारमार्थिक कोई भी कार्य नहीं हो सकता। समुद्र पार लंका में जाने के लिये–

**कहइ रछिपति सुनु हनुमाना।**
**का चुप साधि रहा बलवाना।।**
**(माना, कि.-२)**

यहां जाम्बवान् ने श्री हनुमान जी को बलवान कहा। समुद्र का उल्लंघन करने के लिये बल की आवश्यकता है।

परमात्मप्राप्ति के लिये भी बल की आवश्यकता है। मुण्डकोपनिषद में कहा गया है–

**नायमात्मा बलहीनेन लभ्यो**

सबके अंदर परमात्मा आत्मरूप से विराजमान हैं, परंतु वे उपासना रूप बल से ही प्राप्त किये जा सकते हैं।

श्री हनुमान जी दैवी बल से सम्पन्न हैं। उनका बल भगवान् श्रीराम जी की सेवा के लिये, भक्तों की सहायता के लिये, दुखी जनों की रक्षा के लिये, राग-द्वेष से रहित ही होता है।

वे 'अतुलितबलधामं' अर्थात् असीम बल से सम्पन्न हैं। वे भक्तों के लिये सब कुछ कर सकते हैं।

**संकट कटै मिटै सब पीरा–**

सूरदास जी कहते हैं–

**अबकी राखि लेहु भगवान।**
**हम अनाथ बैठे द्रुम डरियां, पारधि साध्यो बाना।।**
**ताके डर निकसन चाहत हैं, ऊपर रह्यो सचान।**
**दुहूं भांति दुख भयो कृपानिधि कौन उबारै प्रान।।**
**सुमिरत ही अहि डस्यो पारधी, लाग्यो तीर सचान।**
**सूरदास गुन कहं लग बरनौ जै जै कृपानिधान।।**

हे भगवान! इस बार हमारी रक्षा करो। हम अनाथ पक्षी हैं, पेड़ की डाल पर बैठे हुए हैं और व्याध धनुष में बाण चढ़ाकर हमें मारने जा रहा है। उसके भय से हम निकलना चाहते हैं, किंतु ऊपर पक्षियों का शिकार करने वाला बाज हमारी ताक में उड़ रहा है। दोनों ओर से हमारे सामने दुख आया हुआ है। हे कृपानिधान! हमारे प्राणों की रक्षा कौन करेगा? इस प्रकार पक्षियों द्वारा भगवान् का स्मरण करते ही एक सर्प ने ब्याध को डस लिया और धनुष से छूटकर बाण बाज के लग गया। पक्षी इधर तो ब्याध के बाण से और उधर बाज पक्षी के आक्रमण से बच गये। दोनों प्रकार से प्रभु ने पक्षियों की रक्षा की। सूरदास जी कहते हैं– कृपानिधान भगवान! आपकी जय हो, जय हो, जय हो।

वृक्ष की डाल पर बैठे हुए पक्षियों को मृत्यु का संकट दिखायी पड़ रहा है। यदि पक्षी वृक्ष में बैठे ही रहे तो ब्याध बाण मार देगा और यदि उड़कर

ऊपर जाना चाहें तो आकाश में बाज उनके ऊपर आक्रमण करने को तैयार है– इसे कहते हैं संकट, जो भगवान की कृपा से कट गया।

मथुरा नगरी में मगध नरेश जरासंध अपनी तेईस अक्षौहिणी सेना लेकर अठारहवीं बार आक्रमण करने आ रहा था। उसी समय कालयवन नामक यवनराज अपनी तीन करोड़ सेना लेकर मथुरा को पहले ही घेर चुका था। भगवान् श्रीकृष्ण ने मथुरा नगरी पर भारी संकट देखकर युक्ति से काम लिया। अपना पीछा करते हुए कालयवन को एक गुफा में प्रवेश कर लेटे हुए राजा मुचुकुन्द की दृष्टि से भस्म करा दिया। उधर मथुरावासियों स्वजन, सम्बन्धियों, प्रजा सबको अपनी योगमाया शक्ति से विश्वकर्मा द्वारा द्वारकापुरी का दिव्य निर्माण कराकर वहां भिजवा दिया। इधर जरासंध मथुरा पहुंच गया। कृष्ण-बलदेव दोनों तीव्र गति से भाग चले। जरासंध ने उनका पीछा किया। वे प्रवर्षण पर्वत पर चढ़कर ऊपर चोटी से कूदकर द्वारका चले गये। जरासंध को कुछ पता न चला। इस प्रकार मथुरा नगरी पर कालयवन और जरासंध के द्वारा आये हुए संकट को भगवान् श्रीकृष्ण ने अपनी युक्ति से काट दिया।

एक समय काशी में एक निर्धन ब्राह्मण रहते थे। वे संकटमोचन श्री हनुमान जी का नित्य दर्शन करते थे। परिवार के पालन-पोषण की समुचित व्यवस्था थी। एक दिन निर्धनता की मार से दुखी होकर पत्नी ने कहा– केवल हनुमान जी का दर्शन ही करते रहोगे तो भूखों ही मरना पड़ेगा। ब्राह्मण ने कहा– देखो, तुम्हें जो कहना हो हमें कह लो परन्तु अपने इष्टदेव श्री हनुमान जी के विरुद्ध मैं एक शब्द भी नहीं सुन सकता।

उस अपने भक्त ब्राह्मण के आर्थिक संकट को देखकर श्री हनुमान जी के हृदय में करूणा उमड़ आयी। नित्य श्री हनुमान जी का दर्शन करने वाले उस ब्राह्मण को एक दिन मार्ग में गड़े हुए कुछ बर्तनों की झलक मिली। वे द्रव्यराशि से भरे हुए थे। उस द्रव्यराशि को लेकर ब्राह्मण घर आये और अपने स्थान पर ही काशी में श्री हनुमान जी की मूर्ति की स्थापना करायी। उनका दैनिक पूजन-भजन होने लगा। घर-परिवार का आर्थिक संकट दूर हो गया। ठीक ही कहा गया है–

**संकट ते हनुमान छुड़ावै।**
**मन क्रम बचन ध्यान जो लावे।।**

स्वामी रामअवधदास जी जौनपुर के समीप रहने वाले थे। बाल्य अवस्था में उनका नाम रामलगन था। पिता श्री सत्यनारायण जी अच्छे विद्वान और पुरोहिती का काम किया करते थे। इनकी माता जी बचपन में इन्हें रामकथा सुनाया करती थीं।

एक दिन माता जी इन्हें हनुमान जी के द्वारा लंका-दहन की कथा सुना रही थीं। उसी समय कुछ डकैत आ गये। मां डर गयी। उन्होंने कहा– मां तुम डर क्यों गयी? अभी हनुमान जी लंका जला रहे हैं। तुम उन्हें पुकारो, वे हमारी रक्षा करेंगे? मां इतनी भयभीत थी कि कुछ कह न पायी। तभी रामलगन जी पुकारने लगे– ओ हनुमान जी, ओ हनुमान जी! आवो, हमें बचाओ। हमारे घर में कुछ लोग लाठी लेकर आ गये हैं। मां डर गयी है, आप हमारी रक्षा करो।

इतने ही में एक विशालकाय बंदर कूदता हुआ आ गया। उसने दो-तीन डाकुओं के चपत लगायी और वे वहीं गिर पड़े। डाकुओं का सरदार आगे बढ़ा तो उसकी दाढ़ी पकड़कर ऐसी खींची कि वह चीख मारकर वहीं गिर पड़ा और अचेत हो गया।

सारे डाकू अचेत सरदार को उठाकर भाग गये। रामलगन और उसकी मां सब देख रहे थे। बंदर भी कूदकर अदृश्य हो गया। इस प्रकार हनुमान जी ने उनका संकट टाला। यही रामलगन आगे चलकर भक्त रामअवधदास हुए जो अयोध्या के रामभक्त प्रसिद्ध संतों में एक संत हुए हैं। गोस्वामी श्री तुलसीदास जी ने तभी कहा है–

**को नहिं जानत है जग में कपि संकटमोचन नाम तिहारो।**

**श्रीराम सेवा में संकटों का निवारण–** श्रीराम जी की सेवा में रहते हुए हनुमान जी ने अनेक प्रकार के संकटों का निवारण किया है। बालि के भय से ऋष्यमूक पर्वत पर रहने वाले सुग्रीव की श्रीराम जी के साथ मित्रता कराकर उभयपक्ष के काम बनाये। श्रीराम जी ने बालि का वध कर सुग्रीव को राज्य, कोष, पुर, नारी की प्राप्ति करायी और सुग्रीव जी ने वानरी सेना द्वारा श्रीराम जी की सेवा में सीता जी की खोज करायी। इस प्रकार श्री हनुमान जी के प्रयास से ही दोनों के संकट दूर हुए।

अंगद जी के नेतृत्व में श्री सीता जी की खोज करते हुए अवधि बीत जाने पर अंगद और अन्य वानरों ने सुग्रीव जी के द्वारा अपना वध जानकर अनशन करके मरने का निश्चय कर लिया। तब श्री हनुमान जी ने नीतियुक्त वचनों द्वारा उन्हें समझाकर प्राण त्यागने से बचा लिया और वानरी सेना में होने जा रही फूट को दूर किया। साथ ही समुद्र पार कर सीता जी का पता लगाकर समस्त वानरों का संकट काट दिया।

अब मेघनाद ने लक्ष्मण जी को शक्तिबाण मारकर धराशायी कर दिया, तब वैद्य सुषेण को भवन सहित लंका से लाकर उनके द्वारा बतायी गयी संजीवनी बूटी के लिये द्रोणगिरी पर्वत को ही ले आये और सूर्योदय से पूर्व उपचार हो जाने पर श्री हनुमान जी ने भारी संकट से बचा लिया।

युद्ध में मेघनाद ने श्रीराम-लक्ष्मण को नागपाश में बांध दिया। तब श्री हनुमान जी ने गरूड़ को लाकर उनके द्वारा नागपाश का बंधन कटवा कर एक महान संकट को काट दिया।

अपनी सेना के मध्य में मंत्रियों से घिरे, सोते हुए श्रीराम-लक्ष्मण को रावण के कहने से मायावी अहिरावण हरण करके अपनी पातालपुरी ले गया। पता लगने पर श्री हनुमान जी शीघ्र ही वहां पहुंचकर राक्षसों सहित अहिरावण का वध कर दिया। देवी के सामने बलि दिये जाने वाले श्रीराम-लक्ष्मण को अपने कंधों पर बिठाकर अविलम्ब वापस लाकर सारी सेना का संकट काट दिया।

**मिटै सब पीरा–**

पीड़ा शारीरिक-मानसिक दोनों प्रकार की हो सकती है। पीड़ा मिटने पर ही शांति मिलती है और शान्ति में ही सुख मिलता है। पीड़ा के कटने-हटने की बात नहीं कही गयी। कटने-हटने पर पीड़ा फिर आ सकती है और दुख दे सकती है। अतएव पीड़ा के मिटने से ही व्यक्ति को सुख की प्राप्ति हो सकती है।

पीड़ाएं कई प्रकार की होती हैं– शारीरिक पीड़ाओं में शिर, नेत्र, कर्ण, दन्त, ग्रीवा, वक्ष, उदर, कमर, हाथ-पांव आदि की पीड़ाएं होती हैं। उचित संयम, औषधि आदि से ये पीड़ाएं शान्त हो जाती हैं।

कलिकाल ने श्री तुलसीदास जी की बांह में भयंकर पीड़ा पैदा कर कष्ट देना चाहा। बहुत प्रकार के उपचार हुए पर पीड़ा न गयी। अन्त में श्री तुलसीदास जी ने 'हनुमान बाहुक' की रचना करके श्री हनुमान जी को पुकारा और उनकी वह पीड़ा नष्ट हो गयी। काम, क्रोध, लोभ आदि मायिक विकारों से मानसिक पीड़ा पैदा होती है। इनके वशीभूत होकर बड़े-बड़े ऋषि-मुनि भी पीड़ित हुए हैं। श्री हनुमान जी की कृपा से ये पीड़ाएं भी समाप्त हो जाती हैं।

**जो सुमिरै हनुमत बलबीरा–**

आध्यात्मिक समस्त साधनों में 'सुमिरन' अर्थात् स्मरण सबसे सरल, सुगम, सुफल होने का साधन है। भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं–

**अनन्यचेता: सततं यो मां स्मरति नित्यश:।**
**तस्याहं सुलभ: पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिन:।।**
**(श्रीमद्भगवद्गीता-८/१४)**

हे अर्जुन! जो पुरुष मुझमें अनन्य चित्त होकर

सदा ही निरन्तर मुझ परमेश्वर को स्मरण करता है उस नित्य निरन्तर मुझमें युक्त हुए योगी के लिये मैं सुलभ हूं अर्थात् उसे सहज ही प्राप्त हो जाता हूं।

यहां भगवान् ने स्मरण को सबसे सुलभ साधन बताया है। स्मरण में किसी विधि-विधान का कोई नियम नहीं है। आप पवित्र हैं या अपवित्र हैं, आप बैठे हैं या खड़े हैं, आप कहीं जा रहे हैं या कहीं से आ रहे हैं, आप जूते-चप्पल पहने हुए हैं या नंगे पांव हैं, आप कुछ काम कर रहे हैं या शान्त बैठे हैं, आप स्नान घर में हैं या उपासना घर में हैं– सब अवस्थाओं में स्मरण कर सकते हैं। आप जहां कहीं भी, जिस किसी अवस्था, परिस्थिति में, आप अपने इष्ट का स्मरण कर सकते हैं।

मान लो आपके किसी स्वजन के दुर्घटना में हाथ-पांव टूट गये। आपने उस व्यक्ति को चिकित्सालय में ले जाकर डॉक्टरों को दिखाया। गंभीर अवस्था देखकर डॉक्टरों ने शीघ्र ही ले लिया। उसका उपचार हुआ। आवश्यक कार्य से आप घर आ गये पर आपका मन उसी स्वजन में लगा हुआ है। तभी कहा गया है–

**तन से करम करहु बिधि नाना।**
**मन राखहु जहं कृपानिधाना।।**

इसी प्रकार श्री हनुमान जी का भक्त उनका स्मरण कर संकट काट सकता है, पीड़ा मिटा सकता है। स्मरण से परमधाम भी मिल सकता है। रावण द्वारा हरण कर ली गयी सीता जी को ढूंढते हुए श्रीराम-लक्ष्मण मार्ग में आ रहे हैं। सीता जी को मुक्त कराने के लिये, गृध्रपति जटायु ने रावण से युद्ध किया है। रावण ने जटायु के पंख काट दिये हैं–

**काटेसि पंख परा खग धरनी।**
**सुमिरि राम करि अद्भुत करनी।।**

भगवान् श्रीराम जी की अद्भुत लीला का स्मरण करता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा है–

**पूरण काम राम सुख रासी।**
**मनुजचरित कर अज अबिनासी।।**
**आगे परा गीधपति देखा।**
**सुमिरत राम चरन जिन्ह रेखा।।**

**(मानस)**

पूर्णकाम, आनन्द की राशि, अजन्मा और अविनाशी श्रीराम जी मनुष्यों जैसे चरित्र कर रहे हैं। आगे उन्होंने गृध्रपति जटायु को देखा। वह श्रीराम जी के चरणों का स्मरण कर रहा था, जिनमें ध्वज, वज्र आदि रेखाएं हैं। जटायु भगवान् श्रीराम का स्मरण करता हुआ परमगति को प्राप्त किया।

एक भक्त की भावना–

**दीनों के संगाती सदा वीर हनुमान जति,**
**भक्तों की पुकार लख आतुर तें धावे है।**
**भयो ना हतास बजरंग की शरण पाय,**
**अभय बनाय राम रंग में रंगाते हैं।**
**मरकटाधीस राम नाम लसे रग रग,**
**राम से सनेह सरण राम की संभावे है।**
**केसरी के नन्द बाहुबल को निधान जान,**
**काटे फन्द द्वन्द्व नाम लेत ही बिलावे है।।**

वीर त्यागी हनुमान जी दीनों का सदा साथ देने वाले हैं। वे भक्तों को पुकारते हुए देखकर उनकी रक्षा के लिये शीघ्र ही उतावले होकर दौड़ पड़ते हैं। जो वज्र अंगों वाले श्री हनुमान जी की शरण प्राप्त कर लेते हैं, वे अपने उन भक्तों को राम के रंग मे रंग देते हैं अर्थात् श्रीराम का अनन्य भक्त बना देते हैं। श्री हनुमान जी वानरों के राजा हैं अर्थात् सर्वश्रेष्ठ हैं, उनके रग रग में राम नाम का वास है। वे राम के भक्त हैं और राम की शरण में रहते हैं। कपि केसरी के पुत्र हनुमान जी को बाहुबल से भरपूर जानकर जो उनका नाम स्मरण करता है, उसके सांसारिक द्वन्द्व– सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान, राग-द्वेष आदि समाप्त हो जाते हैं और सच्चिदानन्द भगवान् श्रीराम जी को प्राप्त होता है।

# 'सुख और शांति... गीता के द्वारा'

## ( श्री सद्गुरुदेव भगवान के दिव्य प्रवचनों पर आधारित )

● गुरु मां गीतेश्वरी ( गीता भास्कर )

गतांक से आगे....

**मिलता है सच्चा सुख केवल भगवान तुम्हारे चरणों में,**

**गुरुदेव तुम्हारे चरणों में।।**

भगवान् के नाम स्मरण में सच्चा सुख और शांति मिलती है, भगवान के ध्यान में सुख और शांति है तो भगवान् के काम करने में परम सुख और शांति की प्राप्ति होती है।

**'मदर्थ मपि कर्माणि कुर्वुन्सिद्धिमवाप्स्यसि'**

केवल मेरे लिये कर्म करते हुए एवं मेरे निमित्त कर्मों को करते हुए भी मेरी प्राप्ति रूपी सिद्धि को ही प्राप्त होगा।

भगवान का कर्म क्या है? सबका भरण पोषण करना, सबको सुख पहुंचाना, माता-पिता की तरह सबका पालन करना आदि-आदि भगवान् के मोटे तौर पर कार्य हैं।

**'सर्वस्य धातारम् चिन्त्य रूप'**

**(८/९)**

**पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामह**

**(९/१७)**

जो संसार के हित कार्य में लगा हुआ है, सबकी भलाई में जिसका जीवन व्यतीत होता है जैसे भगवान् का आदेश है भक्तियोग में–

**'ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्व भूत हिते रता:'**

जो सम्पूर्ण भूत प्राणियों के हित में रत है वो मेरी प्राप्ति करता है। परमात्मा स्वयं शांताकारम् है, अर्थात् शांत स्वरूप है–

**शांताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं**
**विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगम्।**
**लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं**
**वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्।।'**

भगवान् विष्णु शांत स्वरूप होकर, गगन सदृशं आकाश की तरह सबको अपने आप के अंदर समाये हुये। शेष नाग पर शयन करते हुए भी सुख शांति के स्वरूप, कमल सदृश जिनके नेत्र हैं, लक्ष्मीपति सम्पूर्ण जगत के आधार, सबके पालनकर्ता सबके भय का नाश करने वाले हैं, एकमात्र जगत के आधार हैं। भगवान् विष्णु सांपों की सेज पर लेटे हुए भी शांत स्वरूप हैं, ऐसे भगवान् विष्णु सारे जगत के जीवों के भय नाशन हैं, इसी प्रकार यदि मनुष्य भी कष्टों में शांत रहे तो उसकी लोक परलोक में जय हो जाए।

भगवान् विष्णु के गीता में दिये हुए उपदेश एवं शिक्षाओं का पालन करने से हम भी शांत रूप एवं भय रहित होकर सुखी हो सकते हैं। गीता पाठ में बड़ी शक्ति है। गीता पाठ अर्थ समझते हुए करने से मन के विकार मिटते हैं और सुख शांति का अनुभव होता है। श्री गुरु महाराज का बार-बार यही कथन है– गीता पढ़ो, गीता समझो और तद्नुसार आचरण करो।

श्री गुरुदेव कहते थे कि जिनसे भी मिलो उनको कहो 'गीता पढ़ो'। बस दो शब्द बोलो। कितना खर्च होगा हम कहते थे कुछ भी नहीं महाराज जी, तब गुरुदेव समझाते थे कि खर्च एक पैसा भी नहीं मगर लाभ और पुण्य

जन्म-जन्मांतर तक मिलता रहता है। महाराज जी ने सम्पूर्ण जीवन गीता प्रचार में लगा दिया। शरीर अस्वस्थ होते हुए भी प्रचार प्रसार में लगे रहते थे। महाराज जी मॉरीशस में भाई उमाकांत जी गुप्ता के घर पर थे। गुरुदेव का कार्यक्रम एक मंदिर में निश्चित था। उस दिन महाराज जी को तेज बुखार हो गया। (भक्तों का कष्ट अपने ऊपर लेते थे, भक्तों के तो बड़े से बड़े कष्ट कट जाते थे, पर कुछ देर के लिये महाराज जी अस्वथ हो जाते थे) हम सब ने कहा कि गुरुदेव आज आप विश्राम करिये, शाम को प्रोग्राम में नहीं जाएंगे। महाराज जी ने कहा कि कुछ भी हो जाए मैंने प्रोग्राम के लिये स्वीकृति दी है, तो मैं जरूर जाऊंगा, तुम लोगों ने यह नहीं सुना है– 'जिसकी बात का पता नहीं, उसके बाप का पता नहीं।' खैर डॉक्टर को भी घर पर बुलाकर इन्जेक्शन लगवाया। शाम को महाराज जी प्रोग्राम में चले और वहां पर पूरा एक घण्टा इस मंत्र पर बोले–

**पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।**
**तदहं भक्त्युपहृतमश्नाम प्रयतात्मनः।।**

उस दिन की व्याख्या इतनी गूढ़, सुंदर और अलौकिक थी, श्री गुरुदेव ने आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक तीनों तरह से इसकी व्याख्या की और अंत में गुरुदेव ने इतना जोरदार जयकारा लगाया कि सामने बैठी एक देवी के हाथ से पर्स गिर गया। महाराज जी को गीता के लिये इतनी आस्था थी। लौटते समय महाराज जी बिल्कुल स्वस्थ थे उन्होंने कहा कि जब मैं गीता पढ़ता हूं या गीता पर बोलता हूं तो सारी बीमारी दूर हो जाती है। गीता महाराज जी का जीवन था। श्री सद्गुरुदेव चलती फिरती गीता थे, Living Geeta थे। निद्रा तो बहुत ही कम लेते थे परंतु जो थोड़ी बहुत नींद होती थी, उसमें भी गीता के मंत्रों का उच्चारण चलता रहता था। आश्रम के बड़े से बड़े निर्णय गीता के आधार पर लेते थे।

गीता के कुछ सिद्ध मंत्र श्री गुरु महाराज ने देश-विदेश के प्रेमियों को सिखाये हुए हैं। सुख-शांति तो गीता मंत्र पढ़ते ही मिल जाती है। महाराज जी बार-बार कहते थे कि संसार की ऐसी कोई समस्या नहीं जिसका समाधान गीता में नहीं है। गीता के १५वें अध्याय के १५वें मंत्र पर बहुत जोर देते थे। उसकी महिमा और जप करने की विधि भी समझाते थे। इस मंत्र का जिसने भी जप किया है उनके काम सिद्ध हुए हैं, चमत्कार पाए हैं।

दूसरा ११वें अध्याय के ३६वें श्लोक पर भी बड़ा जोर देते थे। कोई बीमारी, कष्ट, भय या किसी प्रकार की समस्या हो, इस मंत्र के पाठ एवं जप करने से तुरन्त इसका फल मिलता है और अवश्य शांति का अनुभव होता है। इसमें 'रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति' का यही भाव है कि हमारी चिंताएं, कष्ट, बीमारियां, मानसिक व्याधियां सभी राक्षस की तरह परेशान करती हैं, तो इस मंत्र का जप करते ही ये राक्षस दूर-दूर भाग जाते हैं। अनेक बार आजमाया गया है कि यह सिद्ध मंत्र लाख दुःखों की एक दवा है।

सबसे बड़ा सुख शांति प्राप्ति का साधन है 'स्मरण'। स्मरण की महिमा भगवान् ने अनेक जगह पर बताई है। जैसे कि–

**'यज्ञानां जप यज्ञोऽस्मि'**

सारे यज्ञों का शिरोमणि जप यज्ञ है। भगवान् ने जप को अपना स्वरूप बताया है। मन न लगे तो भी स्मरण में बैठना चाहिए चाहे मन यहां-वहां भटकता है, मन में चिंता है कुछ भी हो, हम शायद इस जप को ० समझते हों, बेशक ये अनेक ०००० बनते जाएं परंतु जिस दिन प्रभु

कृपा करके इन शून्य के आगे एक लगा देंगे उस दिन ये सारे ० लाखों-करोड़ों में बदल जाएंगे। भगवान् कभी भी किसी की मजदूरी नहीं रखते, जिस समय उनकी कृपा बरसती है तो निहाल कर देते हैं, मालामाल कर देते हैं।

भगवान् ने आठवें अध्याय में अर्जुन को यही समझाया कि–

**अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।**
**यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः।।**

**(गीता-८/५)**

अर्थात् जो पुरुष अंतकाल में भी मुझको ही स्मरण करता हुआ, शरीर को त्याग कर जाता है वह मेरे साक्षात् स्वरूप को प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

अंतकाल की घड़ी सबसे बड़ी परीक्षा की घड़ी है, असली परीक्षा तो वही है। बाकी संसार की जितनी सारी डिग्रियां हैं, सब यहीं रह जायेंगी। अंतकाल में अगर भगवान् का नाम याद आ गया तो बेड़ा पार है जीवन सफल है। प्रश्न यह उठता है कि अंतकाल में स्मरण होगा कैसे? सबसे मुख्य बात तो यह है। भगवान् ने समझाया कि अर्जुन इसलिये तुम्हें जीवन भर साधना करनी होगी।

**'तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च'**

इसलिये हे अर्जुन! तू सब समय में निरंतर मेरा स्मरण कर और युद्ध भी कर।

स्मरण कर और युद्ध भी कर कहने से भगवान् का क्या प्रयोजन है? युद्ध का अर्थ यहां पर तलवार से युद्ध करना नहीं, बल्कि जीवन संग्राम ही यह युद्ध है, सुबह से रात तक कोई न कोई समस्या, इन समस्याओं से जूझना ही जीवन संग्राम है, यही मनुष्य का कर्म है, ये सारे कर्म कर अर्जुन! पर मन में ध्यान मेरा रख, यह भी तुम्हारा स्मरण ही होगा।

स्मरण करना मन का कार्य है, मन को अपने इष्ट से जोड़ना ही स्मरण है। इसलिये भगवान् ने बार-बार अर्जुन से मन मांगा है।

**'मय्यावेश्य मनो ये मां'** कहा अर्थात् मुझमें मन को लगा। भगवान् ने यह नहीं कहा कि– 'मय्यावेश्य तनो ये मां' भगवान ने तन नहीं, मन मांगा है बार-बार। अर्जुन को निमित्त बनाकर भगवान् बार-बार हमसे मन मांग रहे हैं।

अंतकाल में भगवान् का नाम मन में कैसे आए? पहले यह प्रक्रिया समझनी है जो शरीर छूटते समय होती है। हमारे शरीर में दस प्राण हैं। पांच प्राण और पांच उपप्राण हैं। पांच प्राण हैं– प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान। पांच उपप्राण हैं– कूर्म, नाग, कीकर, देवदत्त और धनंजय। शरीर छूटते समय एक-एक प्राण शरीर से निकल जाता है, पैरों से शुरू होता है। नौ प्राण निकल जाते हैं लेकिन जो दसवां प्राण धनंजय है वो नहीं निकलता, वो मुर्दे के दशम द्वार जिसको ब्रह्मरंध्र कहते हैं वहां रहता है इसलिये मुर्दे का शरीर कभी सिकुड़ जाता है तो कभी फूल जाता है। हम मृतक शरीर के आगे गीता आदि सद्ग्रन्थों का पाठ करते हैं, वो सब धनंजय प्राण सुनता है और उसके अंदर से आशीर्वाद निकलता है। जिस समय ये नौ प्राण निकलते हैं उस समय ही मन का मुख्य काम होता है, मन जाकर उस विषय पर जम जाता है, जिसका चिंतन मनुष्य ने जीवन में अधिक से अधिक किया है। इसलिये कहा गया है–

**'मन एव मनुष्याणां कारण बंधन मोक्षयोः'**

अंतिम प्राण छोड़ने पर मन को वही ध्यान होता है, चिंतन होता है, जिसका चिंतन उसने जीवन भर किया होता है, क्योंकि अंतिम प्राण पर जिस भी प्राणी या चीज वस्तु का चिंतन

होता है फिर अगला जन्म उसी आधार पर मिलता है। भगवान ने बताया कि–

**यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।**
**तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः।।**
**(गी.-८/६)**

अर्थात् हे कुन्तीपुत्र अर्जुन! यह मनुष्य अंतकाल में जिस- जिस भी भाव को स्मरण करता हुआ शरीर का त्याग करता है, उस-उस को प्राप्त होता है, क्योंकि वह सदा उसी भाव से भावित रहता है। यह धनंजय प्राण श्मशान भूमि में अग्नि संस्कार के बाद निकलता है। अंतकाल में अगर प्रभु का स्मरण हो जाए तो फिर बात ही क्या है, जीवन के मूल उद्देश्य की प्राप्ति हो गई। परम सुख परम शांति की प्राप्ति का मुख्य साधन स्मरण ही है। आवागमन का चक्र छूट जायेगा। सच्चिदानन्दघन परमपिता परमात्मा की प्राप्ति होते ही सारे दुःख शोक और संताप मिट जाएंगे।

गुरु मंत्र का जप इसमें सबसे बड़ा सहायक है, गुरु महाराज की कृपा ही सर्वोपरि है। गुरु कृपा से ही निरंतर हृदय में स्मरण चलता रहे, यही जीवन की बहुमूल्य निधि और मुख्य उद्देश्य है। गीता का एक-एक मंत्र महामंत्र है, क्योंकि भगवान् के पवित्र मुखारविंद से निकला है। आदि गुरु शंकराचार्य जी का कथन है–

**भगवद्गीता किंचिदगीता गंगाजल लव कणिका पीता।**

**सक्रदपि येन मुरारि समर्चा तस्य यम न कुरूते चर्चा।**

**भज गोविंदम् भज गोविंदम् गोविंदम् भज मूढ़ मते।**

अर्थात् जो प्राणी भावपूर्वक भगवद्गीता का पाठ नित्य करता है, जो गंगाजल से भी परम पवित्र है, उस गंगाजल रूपी गीता अमृत का पान करता है, उसका अंतकाल समय स्वयं प्रभु उद्धार करते हैं, यमराज का आना तो दूर रहा बल्कि यमराज ऐसे भगवद् भक्त का नाम भी नहीं ले सकते, इतनी अपार महिमा है गीता पाठ एवं स्मरण की।

(शेष अगले अंक में....)

# सम्पुट वल्ली पाठ

देश-विदेश के समस्त गीता आश्रमों में सम्पुट वल्ली पाठान्तर्गत दिनांक ३०-४-२०१४ को श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय का सातवां मंत्र (१८/७) एवं दिनांक १-५-२०१४ को अठारहवें अध्याय का आठवां मंत्र (१८/८) सम्पुट वल्ली मंत्र होगा।

**नियतस्य तु सन्न्यासः कर्मणो नोपपद्यते।**
**मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः।।**

**श्रीमद्भगवद्गीता-१८/७**

**दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत्।**
**स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत्।।**

**श्रीमद्भगवद्गीता-१८/८**

# सर्वस्य चाहं

● श्रेयानन्द

**सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च।**

**वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम्।।**

**(गीता- १५/१५)**

**सर्वस्य च अहम् हृदि सम-नि-विश-तः मद-तः स्मृतिः ज्ञानम् अप-उहनम् च।**

**वेदैः च सर्वैः अहम् एव वेद्यः वेदान्त-कृत-वेद-विद् एव च अहम्।।**

**पदच्छेद–**

च = पुनः, अहम् = वासुदेवः, सर्वस्य = सर्व प्राणिनाम्, हृदि = हृदये, सन्निविष्टः = स्थितः-भाषितः, मत्तः = वासुदेव या, स्मृतिः = अनुभूतिः, ज्ञानम् = विवेकम्, च = तथा, अपोहनम् = विस्मरणम्, उहापोहम् निवारणम्, सर्वैः = समस्तैः, वेदैः = निगमैः अहम् = परमात्मा, एवम् = एवमेव, वेद्यः = वेदित्व्यं:, वेदान्तकृत् = वेदान्त प्रवर्तकः, च अहम् = ईश्वरः, एव = निश्चयेन, वेदवित = वेदार्थवित्।।

**अन्वयार्थ–**

अहम् = मैं वासुदेव-सर्वभूतान्तरात्मा, सर्वस्य = सभी प्राणधारियों के, हृदि = हृदय में, सन्निविष्टः = अन्तर्यामी रूप से प्रविष्ट स्थित हूं, च = तथा, मत्तः = मुझसे ही, स्मृति = स्मृति-आगम, पुराण, ज्ञान = विवेक-ज्ञान, च = और, अपोहन = विस्मरण-उहापोह निराकरण होता है। च = और, सर्वैःवेदैः = सर्ववेद श्रुति-निगमो द्वारा, अहम् = मैं ही, वेद्यः = जानने योग्य तात्पर्य, तथा वेदान्त कृत् = वेदान्त का कर्ता, च = और, वेदवित् = वेद तत्त्व का ज्ञाता, अहम् = मैं, एव = ही हूं।

**चौपाई–**

**मोसे ज्ञान अपोहन स्मृति। सब प्राणिन के हृदय में स्थित।**

**जानन योग्य वेद से अहउं। सकल वेद को ज्ञाता अहऊं।।**

**I am stalled in the hearts of all,**
**memory wisdom, absense from Me all.**
**It is whom the Vedas seek to know,**
**I am that's author only then I know.**

**सामान्य अर्थ–**

गीता का सार मात्र चार शब्दों में आ गया। **सर्वस्य चाहं-मामेकं शरणं (गीता-१८/६६)।** सम्पूर्ण ज्ञान है, सर्वस्य चाहं में। सम्पूर्ण भक्ति-कर्म निहित है, मामेकं शरणं में। व्रज कहने की भी आवश्यकता नहीं। शरणं में ही सम्पूर्ण शरण, श्रवण, समर्पण, प्रपत्ति, भक्ति कर्म का समापन है।

भगवान ने गीता अध्याय १५ के पूर्व मंत्र १३, १४ में आहार उपलब्धि व आहार पाक की बात में स्पष्ट किया कि आहार में भी भगवान और उपलब्ध कराने वाले भी भगवान तथा पचाने वाले भी भगवान और सब प्राणियों में भी एकमेव भगवान हैं। जिनसे स्मृति स्वयं की अनुभूति हैं, याद रहता है तथा स्मृति शास्त्र पुराण आगम भी वही है। जिनसे ज्ञान शक्ति प्राप्त है। और अपोहन अर्थात् अनाश्यक का विस्मरण तथा विस्मरण ही समाधि है, होती है। तथा दूसरा अर्थ यह भी है कि ऊहापोह के संशय, विपर्यय विक्षेप, किन्तु परन्तु दोष हटाने वाली अपोहन शक्ति भी वही हैं। तथा वेदों श्रुतियों निगम शास्त्र द्वारा एकमात्र वासुदेव अन्तर्यामी परब्रह्म ही जानने योग्य है। अर्थात् ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय वही हैं। तथा वेदान्त के कर्ता

रचयिता ब्रह्मा के भी कर्ता ब्रह्म तथा केशव वादरायण रूप से वेदान्त शास्त्र उत्तर मीमांशा के रचनाकार भी वही हैं। तथा वेदों के तत्त्वज्ञ ज्ञाता भी एकमात्र वही हैं। वैसे तो रावण आदि कई वेदज्ञ ब्राह्मण हो चुके हैं, किंतु वे कोई भी तत्त्वज्ञ ज्ञाता नहीं।

**'आहार शुद्धौ-सत्त्व शुद्धि, सत्त्व शुद्धौ-ध्रुवा स्मृतिः'।** आहार शुद्ध होगा, जब उसे भगवान का प्रसाद समझकर पाओगे। उसी से सत्त्वगुण की शुद्धि होगी और अटल स्मृति आत्मा (स्व) ज्ञान होगा। दाता भी राम, पाने वाला भी राम, पाया गया भी राम। सर्वत्र रम रहा राम (ब्रह्म) है।

**जड़ चेतन जग जीव जत सकल राममय जानि।।**
**अयं हि रोहिणी पुत्रो रमयन सुहृदो गुणैः।**
**अख्यास्ते राम इति बलाधिक्यात् बलं विदुः।।**
**(श्रीमद्भागवत्)**

यह रोहिणी पुत्र सबका सुहृद सबमें रमण करने वाला सद्गुण युक्त राम है। सबसे अधिक बलशाली होने से बलराम नाम से जाना जायेगा।

**राम सकल नामन से अधिका।**
**होहु नाथ अघ खग गन बधिका।।**
**(रा.च.मा. अरण्य काण्ड)**

सबसे अधिक प्रचलन में भगवद् नाम में राम है। क्योंकि सबमें रम रहा है। भगवान वही कहते हैं कि सब में मैं ही रम रहा हूं। भगवान अन्तर्यामी हैं। आत्मा राम हैं। भगवान कहते हैं कि भगवान से ही स्मृति है। स्मृति शब्द गीता में दो बार आया है। पहले १५/१५ में फिर १८/७३ में। अर्जुन ने जैसे कहा 'नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा- करिष्ये वचनं तव' गीतोपदेश परिपूर्ण। अब अर्जुन भी चुप भगवान भी चुप। यहां यह विचारणीय है कि स्मृतिर्लब्धा कैसे हुआ? त्वत्प्रसादान्मयाच्युत। भगवान की कृपा प्रसाद से अर्जुन स्मृति स्व (आत्मा) रूप को प्राप्त हुआ। आत्मा तो आत्मस्थ है ही। उसे विस्मरण हो गया है। माया के दोष मल, विक्षेप आवरण के कारण। भगवान कहते हैं मुझसे ही तो सबको पता है कि उसका अस्तित्व है। उसको सूर्य, चन्द्र, अग्नि प्रकाशित नहीं करते क्योंकि वह स्वयं सूर्य चन्द्र का ज्ञाता, द्रष्टा साक्षी है। **'न तद्भासयते सूर्यो न शंशाको न पावकः'** भगवान् इसी अध्याय के छठे मंत्र में बता आये हैं।

स्मृति का एक अर्थ पुराण भी है। जोकि सुनने के बाद स्मृति में धारण करके वेदव्यास जी द्वारा रची गई। 'भागवताप्रोक्तं भागवतम्' भागवत के कथाकार स्वयं भगवान हैं। उन्हीं की कथा उनके द्वारा रचित है। अतः स्मृति स्मरण व पुराण भगवान ही है। भगवान कहते हैं, ज्ञान भी भगवान द्वारा होता है। पहले तो श्रवण सत्संग भी भगवद् कृपा से मिलता है।

**बिनु सत्संग विवेक न होई।**
**राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।।**

सत्संग होने पर श्रवण में श्रद्धा चाहिए। श्रद्धा भी भगवद् कृपा से उत्पन्न होती है। तब ज्ञान प्राप्त होगा कि एकमात्र 'वासुदेवः सर्वमिति' ही ज्ञान है। आगे भगवान ने बताया कि अपोहन शक्ति भी भगवान ही हैं। अपोहन के दो अर्थ हैं। पहला है विस्मरण। जब तक संसार स्मृति में है, भगवान विस्मृत है। भगवान की स्मृति से आत्मा की स्मृति से संसार विस्मृत होगा। अभ्यास होगा भगवान में, वैराग्य होगा संसार से। भगवान कहते हैं यह विस्मरण कराने की शक्ति भी मैं ही हूं। संसार का, स्वयं का, शरीर का, सम्पत्ति का, सम्बन्ध का सम्पूर्ण विस्मरण ही सहज समाधि है। जोकि पूर्ण निर्पेक्ष है। **'ऊधौ सहज समाधि लगी।'** अद्वैत में अहं ब्रह्मास्मि, अयमात्मा ब्रह्म, प्रज्ञानं ब्रह्म, तत्त्वमसि, सोऽहं, शिवोऽहं और द्वैत में तू ही तू। भगवान कहते हैं भौतिक विस्मरण कराने वाला मैं ही हूं।

अपोहन का दूसरा अर्थ है शास्त्र में, संत में गुरु के वचनों में जो ऊहापोह की स्थित है कि ऐसा कैसे है, और उनमें संशय तथा विपर्यय (विपरीत अर्थ) के साथ किन्तु-परन्तु (If-But) उत्पन्न होते हैं। उन्हें दूर करने वाला अपोहन होता है। मैं ही हूं। तथा सब वेदों अर्थात् श्रुति जो सुना गया अलौकिक शब्द है वह भी मैं ही हूं। यद्यपि भगवान ने गीता के ४/१ मंत्र में कहा **'इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्'** अर्थात् इस अविनाशी योग को इस वैवस्वत मनवन्तर के आरम्भ में सूर्य (विवस्वान) के प्रति कहा था। इस अव्ययम् से ही स्पष्ट है कि इस अविनाशी योग का प्रथम श्रोता कोई और ही है। यह श्वेतश्वर उप. में स्पष्ट है कि वेद के वक्ता भगवान और प्रथम श्रोता ब्रह्मा जी हैं।

**यो ब्रह्मणं विदधाति पूर्वम् यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै।**
**ते हि देवआत्मबुद्धि प्रकाशं मुमुक्षुवैर्शरणमहमप्रपद्ये।।**

**(श्वे.उप. ६/१८)**

इस प्रकार वेद के कर्ता ब्रह्म वासुदेव हैं और जानने योग्य एकमात्र ब्रह्म ही है।

**जेहि जाने जग जाग हेराई।**
**जागे जथा सपन भ्रम जाई।।**

**एकोब्रह्म द्वितीयोनास्ति, एकंसद्विप्रा बहुधा वदन्ति, सर्वरवल्विदं ब्रह्म सर्वंज्ञानमन्तं ब्रह्म, विज्ञानमानन्दम् ब्रह्म, सच्चिदानन्द मयोऽयं ब्रह्म और लीला बिहारी एकमेवऽद्वितीयं ब्रह्म।।**

वेदान्त का फल भी ब्रह्म ही है। वेदान्त (ज्ञान का अन्त) भी ब्रह्म, भगवान ही हैं। उत्तर मीमांशा वेदान्त के रचयिता भगवान वादरायण केशव (क = ब्रह्मा), (अ = विष्णु), (ईश = शिव) के व (वपु) केशव (व्यास जी) भी भगवान वासुदेव ही हैं।

**शंकरं शकराचार्यं केशवं वादरायणम्।**
**शूत्र भाष्य कृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः।।**

शंकर जी के अवतार शंकराचार्य, ब्रह्म सूत्र भाष्य करने वाले तथा ब्रह्मसूत्र के रचयिता केशव वादरायण भगवान को पुनः पुनः वन्दन।

भगवान् वासुदेव ब्रह्म वेद के कर्ता हैं। और सारे ज्ञान का अन्त जिनमें हो जाता है तथा वाणी को विराम लगाकर अनिर्वचनीय नेति नेति रह जाता है। वह भी भगवान् वासुदेव (ब्रह्म) ही है। भगवान कहते हैं कि वेदों के तात्पर्य तत्त्वज्ञान के ज्ञाता एक मात्र वासुदेव (ब्रह्म) ही हैं। वेदों का ज्ञाता तो महापंडित रावण भी हुआ किन्तु वह तत्त्वज्ञानी वेदज्ञ नहीं कहा जा सकता। क्योंकि उसमें संशय है कि राम ब्रह्म हैं या राजकुमार।

**जौ नर रूप भूप सुत कोई।**
**हरिहौं नारि जीति रन सोई।।**

**संशयात्मा विनश्यति।** संशयी का विनाश होता है। अतः उसका भी विनाश हुआ। भगवान अविनाशी हैं। न भगवान को संदेह है न भगवान की सत्ता, क्रिया, ज्ञान, इच्छा में संदेह होना चाहिए। भगवान सर्वात्म-अन्तरात्मा हैं। भगवान सर्व समन्वय है।

**'ॐ स य एषां हृदय आकाशस्तस्मिन्नयंपुरुषो मनोमयः अमृतो हिरण्य मयः।'**

**(तै. बल्ली १/१३)**

अर्थात् सर्व प्राणियों के हृदयाकाश में यह पुरुष निवास करने वाला मनोमय है। ज्ञान रूप क्रिया वाला है और अन्तःकरण में चैतन्यात्मक ज्योति है। अन्तर्यामी वासुदेव परम ज्योति ही नौ अन्तराय-व्याधि, अप्रवृति (सत्यान), संशय, प्रमाद, आलस्य, अविरति, भ्रान्ति, अलब्ध-भूमिकत्त्व (लक्ष्य/उद्देश्यहीनता) अस्थिरता को दूर करने वाली है।

कैवल्योपनिषद (२२) में ऐसा ही वर्णन है–

**वेदैरनेकैरहमेववेद्यो, वेदान्त कृद्वेदविदेव**

**चाहम्।**

**न पुण्य पापे मम नास्ति नाशो, न जन्म देहेन्द्रियबुद्धिरस्ति।।**

भगवद् तत्त्व को जान लेने के बाद न पुण्य, न पाप, न जल, न मृत्यु, बुद्धि का ही विलय हो जाता है। **'न पुण्यं न पापं न सुखं न दु:खं चिदानन्द रूप शिवोऽहम शिवोऽहम्।** जब भगवान वासुदेव का ही अन्तरात्मा रूप से वास है तो शेष है ही क्या।

**अन्त: प्रविष्ट: शास्ता जनानां सर्वात्मा** अर्थात् प्राणियों का शासक सर्वात्मा अन्तर प्रविष्ट है। (तै.आ. ३/११)

विष्णु पुराण (१-१७-२०) के अनुसार प्रह्लाद भक्त बताते हैं कि हृदय स्थित भगवान विष्णु ही सर्वजगत के एकमात्र उपदेशक हैं। उनके अतिरिक्त कौन क्या सिखा सकता है।

**शास्ता विष्णुरशेषस्य जगतो यो हृदि स्थित:।**
**तमृते परमात्मानं तात: क: के न शास्यते।।**

इसी तथ्य की पुष्टि भगवान ने गीता १८-६१ में की।

**ईश्वर: सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।**
**भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया।।**

भगवान ने गीता-१३/१७ में बताया कि हृदय में स्थित ज्ञान, ज्ञेय, ज्ञानगम्य भगवान ही है।

**ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमस: परमुच्यते।**
**ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम्।।**

अपोहन विस्मरण का अर्थ मात्र साक्षी समाधि भाव में मनु. १२.१२३ में स्वप्नवत् वर्णित है।

**प्रेशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि।**
**रूकमाभस्वप्नधीगम्य विद्यान्तं पुरुष परम्।।**

भगवान ने गीता के दूसरे अध्याय के ४५वें मंत्र में वेद की निंदा न करके उसके कर्मकाण्ड प्रधान नैमित्तिक कर्म फल की निंदा की है। क्योंकि ८० हजार ऋचायें कर्मकाण्ड प्रधान हैं, १६ हजार उपासना तथा ४ हजार ज्ञान प्रधान हैं।

मनुस्मृति १२वें अध्याय में भी ९५ से १०३ मंत्र तक वेद महिमा का निरूपण है। १०३वें श्लोक में वेदज्ञ ही ब्रह्मज्ञ है, चाहे किसी भी आश्रम में रहे।

**वेद शास्त्रार्थतत्त्वज्ञो यत्रतत्राश्रमे वसन्।**
**इहैव लोके तिष्ठत् स: ब्रह्मभूयाय कल्पते।।**

विष्णु सहस्रनाम श्लोक २७ में भगवान विष्णु को **'वेदो विदविदव्यंग्यो वेदांगोवेदवित कवि:'** कहा गया है। अर्थात् भगवान वेद रूप है, वेदानुसार व्यवहार से वेदवित् वेद रचयिता, ज्ञाता, धाता हैं और श्लोक ११० के अनुसार शब्दातिग: शब्दातीत है। फिर भी वेदों में भगवान का वर्णन है। **'सर्वे वेदायत् पदमामनन्ति'** अर्थात् ब्रह्मपद का ही वर्णन समस्त वेद करते हैं। अत: शब्द सह है। (क.उप. १.२.२५)

भीष्म पितामह ने महाभारत में भगवान कृष्ण को कहा वेद से भी अधिक है वह-

**'वेदवेदांग विज्ञानं बलं चाप्यधिकं तथा'**

इस प्रकार भगवान ही संसार सागर से तारने वाले, सबको जानने वाले, सब प्रकार से जानने वाले, बिना क्रम के जानने वाले हैं। उनसे प्राप्त ज्ञान ही विवेकजनित ज्ञान है।

(पांत.योग. ३/५/४५)

**'तारकं सर्वविषयं सर्वथाविषयमक्रमं चेति विवेकजं ज्ञानम्'**

वह श्रुति जनित अनुभव ज्ञान का प्रकट हो जाना स्मृति है। (पांत.यो. १.११)

**'अनुभूत विषयासम्प्रमोष: स्मृति:'**

ब्रह्मसूत्र १.३.२३ में 'अपि च स्मर्यते' कहकर पुष्टि की गई है वह स्मृति है। श्रुति को ब्रह्म सूत्र ३.३.४ में दर्शयति च कहा है- 'सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति' (क.उप. १.२.२५)

**आधिभौतिक अर्थ-**

भौतिक रूप से यह मंत्र अति महत्वपूर्ण है। सकामी भक्त इस मंत्र को निरन्तर जाप करके

सिद्ध कर लेने से प्रभावपूर्ण वाणी के स्वामी बन सकते हैं। जिससे उनकी इच्छानुसार अन्य व्यक्ति व्यवहार करेंगे। क्योंकि अपने में और सबमें एक ही तत्त्व स्थित होने की भावना रखने वाले मनोवैज्ञानिक रूप से एकता का सर्वत्र अनुभव करेंगे। जिससे उनके मनोनुकूल अन्य का भी व्यवहार होगा। कोई पर नहीं है।

**आत्मानः प्रतिकूलानि परेषाम् न समाचरेत्।**
**परोपकाराय पुण्याय वापाय परपीडनम्।।**

जैसे हम नहीं चाहते कि हमारे प्रतिकूल व्यवहार कोई करे, वैसे हमें भी अन्य के प्रति आचरण नहीं करना चाहिए। परोपकार ही परम पुण्य है, पर पीड़ा ही पाप है।

**परहित सरिस धर्म नहिं भाई।**
**पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।**

अंग्रेजी लेखक हैजलिट ने On Saying Please (कृपया कहने पर) निबन्ध में कहा कि जो व्यवहार आप अपने प्रति चाहते हो, वह दूसरों के प्रति करो। यह प्रेरणा उसके उपरोक्त शिक्षा से ग्रहण की थी। अतः प्राणी जब संशय रहित होगा, सबके प्रति दुर्व्यवहार, स्वार्थपरता से रहित होगा। उसकी स्मृति भी ठीक रहेगी, ज्ञान भी अच्छा और उचित दिशा में होगा। संकीर्ण भावना रखने वाला कभी ऊंचा नहीं उठ सकता। संदेह भाव वाला कभी सफल नहीं हो सकता। स्वार्थी व्यक्ति कभी शांत चित्त रह ही नहीं सकता। कपटी कभी सुखी नहीं रह सकता। आत्मबल होने से मनोबल, शरीर बल बुद्धि बल भी उसके सहायक होंगे। और निःस्वार्थ भाव से किये गये कर्म ही उसे निश्काम कर्मयोगी बना देंगे। वह स्वस्थ, चैतन्य, प्रसन्न, शांत, सबल होगा। कर्मठ होगा।

**कादर मन कहुं एक अधारा।**
**दैव दैव आलसी पुकारा।।**

**आधिदैविक अर्थ-**

जहां कर्म योगी कर्म में विश्वास करता है, भाग्य या दैव में नहीं। वहीं दैविक भाव वाला सम्पूर्ण क्रिया कलाप अपने इष्टदेव में निहित मानता है। वह अन्य द्वारा किये गये सद्व्यवहार दुर्व्यवहार आदि को प्रभु प्रेरित मानता है। जैसे विप्र बालक को लोमस ऋषि ने कौआ हो जाने का कठोर श्राप दिया। किन्तु वह अविचलित आनंदित भाव से श्राप स्वीकार करके कौआ बन गया। सोचा 'उर प्रेरक रघुबंश विभूषण'-

**लीन्ह श्राप मै शीश चढ़ाई।**
**नहिं कछु भय न दीनता आई।।**

ऐसे ही हम सभी मानें कि भगवान ही हम सबके हृदय में वास करते हैं। जब भगवान का वास हृदय में है तो हृदय निर्मल होगा। हमारा भाव भी सबके प्रति निर्मल होगा। न ज्ञान विद्वता का मूर्खता पूर्ण अहंकार होगा, न कर्तापन का ही भाव होगा। व्यर्थ चेष्टायें भी नहीं होंगी। क्योंकि ज्ञान अनन्त समुद्र है। हमारा ज्ञान समुद्र की एक बिन्दु से भी कम है। यह भाव रखने से भगवद्कृपा बरसेगी। ज्ञाता भगवान है। साक्षी भगवान हैं। तो कर्तव्य कर्म ही होंगे। अनुचित, अवैध कर्म नहीं होंगे। सदैव हृदयस्थ हृषीकेश ही ध्यान में रहने से मन, बुद्धि, चित्त शांत रहेंगे। अहंकार होगा ही नहीं। जब अहंकार नहीं होगा तो क्लेश का प्रश्न ही नहीं उठता। भगवान ने गीता के १२वें अध्याय में पांचवें मंत्र में बताया कि उन अव्यक्त में आसक्त चित्त वालों को क्लेश अधिक होता है। क्योंकि देहाभिमान है। जैसे आप अपना कार्य या भगवान का कार्य मान करके शीघ्र नहीं थकते किन्तु मजदूरी करके शीघ्र थक जाते हैं। ऐसे ही जब भगवद् प्रेरणा से कार्य करेंगे तो न थकान होगी, न पीड़ा, न परिणाम का सुख-दुःख। गुरु नानकदेव जी की भांति-

**राम की चिड़िया राम दा खेत।**

**चुग्गो चिड़िया भरि भरि पेट।।**

**आध्यात्मिक अर्थ-**

आधिदैविक भाव में सर्वत्र परमात्मा है तो आध्यात्मिक भाव में सर्वत्र आत्मा है। आत्मा अपनी-पराई नहीं होती। आत्मा तो बस एक ही है। उससे रिक्त कोई स्थान नहीं है। सर्वव्यापक है। अतः यही सोच है कि शरीर पृथक पृथक होकर भी आत्मभाव से सब अभिन्न हैं। ऐसे में किसी भी व्यक्ति को कुछ कहते करते देखकर यह आभास नहीं होता कि मैं नहीं कोई और कह या कर रहा है। फिर ज्ञानी-अज्ञानी, अल्पज्ञानी आदि का प्रश्न ही नहीं उठता। और कोई भी क्रिया प्रतिकूल नहीं प्रतीत होती। यही अनुभव शांति प्रदान करता है। न ग्रहण है, न त्याग, न छूट, न हानि, न लाभ, न निंदा, न प्रशंसा। समत्व भाव ही योग है। जब एक ही तत्व सबमें है तो विषमता कहां। सबके हृदय में एक ही है। तब सुना हुआ, स्मरण में आया हुआ, अनुभवगम्य भाव संदेह के किन्तु परंतु मल विक्षेप आवरण दोष से रहित होगा।

संसार को नानक देव जी की भांति तेरा-तेरा कहने से कल्याण है। तो निश्कपट भाव से मेरा मेरा कहने से भी कल्याण है। स्वार्थजनित तेरा-मेरा, राग-द्वेष जनित विकार ही विषाद है। यही द्वन्द है। अतः अधिदैविक और आध्यात्मिक दोनों ही समान हैं।

# वसुदेव सुतं देवम्

● स्वामी मुक्तानंद

**वसुदेव सुतं देवं, कंस चाणूरमर्दनम्।**
**देवकी परमानन्दं, कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्।।**

अर्थात् वसुदेव के पुत्र, कंस और चाणूर (काम और क्रोध) को मारने वाले देवकी (बुद्धि) को परम आनन्द देने वाले, सारे जगत् के गुरु भगवान् श्रीकृष्ण की हम वन्दना करते हैं।

यह मंत्र वंदना का मंत्र है। इसको महामंत्र माना गया है। गीता जी के पाठ के प्रारम्भ में इस मंत्र का गान किया जाता है। गुरुदेव भगवान् ने अपने भौतिक शरीर का त्याग करने से पूर्व इस मंत्र के जाप पर बहुत अधिक जोर दिया। इसकी महिमा बताते हुए वे कहा करते थे कि यह मंत्र शनि से भी बढ़कर है। जो इस मंत्र का जाप करते हैं, उन पर शनि का कोप भी नष्ट हो जाता है। वो भक्त इस मंत्र के द्वारा अपने भाग्य को भी बदल सकते हैं। गुरुदेव भगवान के निमित्त इस मंत्र का अधिक से अधिक सभी भक्तों ने पाठ किया, जिसके प्रभाव से वे कई वर्ष और हमारे साथ भौतिक रूप से विद्यमान रहे। फिर स्वेच्छा से उन्होंने अपनी भौतिक देह का त्याग किया। आज भी उनका चलाया हुआ यह मंत्र सभी जगह चल रहा है।

एक पंडित जी थे, वे जितनी भी मेहनत करते थे, उनको नित्यप्रति एक डेढ़ आना ही मिलता था। जिससे उनका गुजारा मुश्किल से होता था। एक बार देवर्षि नारद घूमते हुए उनके पास आए। पंडित जी ने यथाशक्ति नारद जी का आदर-सत्कार किया। तत्पश्चात् पूछ बैठे– हे देवर्षि! मैं जितनी भी मेहनत करता हूं, मुझे नित्यप्रति एक या डेढ़ आना ही मिलता है, क्या मेरे भाग्य में केवल इतना ही लिखा है? नारद जी बोले– मैं अभी बैकुण्ठ में भगवान के दर्शन करने जा रहा हूं। मैं तुम्हारा यह प्रश्न भगवान से पूछूंगा, फिर तुम्हें बताऊंगा। तब तक तुम्हें मैं एक मंत्र बताता हूं, तुम निरन्तर इसका जाप करते रहना। नारद जी ने पंडित जी को 'वसुदेव सुतं.....' का मंत्र कण्ठस्थ करा दिया। नारद जी तो चले गये और पंडित जी लगातार इसी मंत्र को

जपने लगे।

नारद जी ने भगवान से वही प्रश्न पूछा तो प्रभु बोले– हां, उस पंडित जी के भाग्य में २० वर्षों तक केवल डेढ़ आना ही लिखा है, इससे अधिक नहीं। नारद जी यह सुनकर भक्त के पास लौट आये और कहने लगे– हे भक्तराज! भगवान ने कहा है कि तुम्हारे भाग्य में २० वर्षों तक केवल डेढ़ आना ही लिखा है। पंडित जी ने पुनः नारद जी से निवेदन किया– हे देवर्षि! हे मुनिवर! मेरी एक प्रार्थना भगवान से कर दो कि २० वर्षों की जितनी भी राशि बनती है, वे मुझे एक साथ दे दें। नारद जी ने उस भक्त की प्रार्थना को भगवान के सम्मुख रखा तो प्रभु बोले– ठीक है, उसे २० वर्ष की राशि एक साथ दे दी जायेगी।

इधर पंडित जी निरन्तर 'वसुदेव सुतं देवं....' मंत्र का जाप करते रहते। एक दिन अचानक जब एक आधी रोटी खाने बैठे तो एक बंदर आया और उनकी वो रोटी छीनकर ले गया। सोचने लगे कि आधी रोटी भी आज नसीब में नहीं थी। फिर दृष्टि पड़ी एक पुरानी सी गुदड़ी पर जो बंदर फैंक कर गया था। उसे उठाया, खोलकर देखा तो उसमें एक चमकता हुआ छोटा सा हीरा था। सुनार के पास उसे बेचा तो बदले में कुल ९२० रुपये मिले। यह उसके २० वर्ष की कमाई थी।

पंडित जी ने अपनी कमाई के ९२० रुपये अच्छे कार्यों में लगा दिये। वह नित्यप्रति भगवान् को भोग लगाकर प्रसाद बांटने लगा। सुबह से शाम तक बच्चों की भीड़ लग जाती और पंडित जी प्रसाद बांटते रहते। पंडित जी की ख्याति दूर-दूर तक फैल गयी। अब तो लोग पैसे देने लगे कि आज का प्रसाद हमारी तरफ से बांटो। एक सेठ ने सुना तो भण्डारे के लिये ५०१ रुपये दे गया। खूब भंडारा हुआ। दूसरे दिन एक और सेठ ५००१ रुपये भण्डारे के लिए दे गया। पंडित जी श्रद्धा सहित मंत्र का जाप करते-करते भण्डारा तैयार करवाते और वितरण करवाते। सभी भक्तों को भी उन्होंने मंत्र सिखा दिया। सभी मिलकर मंत्र का जाप करते। पंडित जी की शुद्ध भावना व इस मंगल कार्य से सभी लोग बहुत ही प्रभावित हो गये।

एक सेठ ने पंडित जी के लिए एक बढ़िया सा मकान बनवा दिया। लोग पंडित जी को पूजने लगे। क्योंकि एक तो पंडित जी निरन्तर वसुदेव सुतं देवं.... मंत्र का जाप करते और दूसरा उन्होंने अपनी सारी कमाई को भगवान के निमित्त समर्पित कर दिया। अब तो पंडित जी का जीवन सुखमय हो गया।

इस बार देवर्षि नारद आये तो पंडित जी की ठाट-बाट देखकर आश्चर्य में डूब गये। सोचा– यह वही ब्राह्मण है, जिसके भाग्य में २० वर्षों तक केवल डेढ़ आना ही नित्यप्रति का लिखा था? तो फिर आज यह इतनी ठाट-बाट कैसी? किस कमाई से यह मौज व आनंद ले रहा है? गये भगवान के पास और पूछने लगे– प्रभु! आपने मुझे झूठा बना दिया। सारी बात बताई और पंडित जी के इस प्रकार ठाट से जीवनयावन का कारण पूछा। भगवान ने कहा– नारद! यह सच है कि उसके भाग्य में जितना था, उसे उतना ही मिला। लेकिन उसने अपनी २० वर्षों की कमाई ९२० रुपये को नेक काम में लगा दिया और निरन्तर मुझे प्रणाम करता रहा। 'वसुदेव सुतं देवं. ..' मंत्र का जाप करके नित्य-निरन्तर वह मेरी वंदना करता रहा। अतः आज उसका भाग्य बदल गया। उसके भाग्य का सितारा चमक उठा और भाग्य का लिखा बदल गया है। उसने नया कर्म करके विधाता की लेखनी को बदल दिया है। मंत्र का जाप करके उसने अपने पूर्व जन्म के पापों को नष्ट कर डाला है। नारद जी यह सब सुनकर प्रसन्न हो गये और प्रभु को प्रणाम करके चल दिये। अस्तु, 'वसुदेव सुतं देवं....' मंत्र शक्तिशाली मंत्र है, नित्यप्रति इस मंत्र का जाप करें।

# सुख और शान्ति

● स्वामी गीता मातेश्वरी (गीता भास्कर)

गतांक से आगे (भाग-२)

गत अंक में हम पढ़ चुके हैं कि सुख का हमें आभास हो, सुख को हम पूर्ण रूप से भोग पायें– इसके लिए अति आवश्यक है कि हमारा मन पूर्णतः शान्त हो क्योंकि अशान्त मन को कभी सुख प्राप्त नहीं हो सकता। शांति की प्राप्ति कैसे हो– इसके लिए भगवान् की बताई युक्तियां अपनायें। प्रथम युक्ति हमने पढ़ी– शान्ति जब भी मिलेगी, त्याग से ही मिलेगी। संग्रह में शान्ति नहीं है– त्याग में शान्ति है। धन को एकत्रित करके रखते जायें तो क्या धन से जीवन की हर वस्तु की पूर्ति हो जायेगी? नहीं पूर्ति तभी होगी जब अपने धन का त्याग करके अर्थात् धन को खर्च करके हम वस्तु खरीदेंगे, तभी पूर्ति होगी। धन, धन ही हो सकता है, धन को खाया नहीं जा सकता, जिससे हमारे पेट की पूर्ति हो जाये। हां धन का खर्च करके सुख के साधनों को हम खरीद सकते हैं, जिससे हम सुखी हो जाते हैं अर्थात् धन का त्याग किया, तभी तो कुछ खरीदा और हम सुखी हुए। अतएव याद रखें–

**'त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्' (गीता-१२/१२)**

एक बार कुछ यात्री नदी के किनारे चल रहे थे, उन्हें नदी पार करनी थी। उनमें एक संत भी थे। अचानक इसी विषय पर चर्चा चल रही थी कि धन गुजारे के लिए तो ठीक है, किन्तु धन का लोभ व्यक्ति को ले डूबता है। एक व्यक्ति ने कहा– संत जी धन के बिना गुजारा भी तो नहीं है। इतने में एक नाविक नौका लेकर आया, वे सब नौका में बैठकर नदी पार उतर गये। नाविक ने पैसे मांगे। अब संत जी के पास तो पैसे थे नहीं, उस व्यक्ति ने अपने व संत जी के पैसे दे दिये। अब वो व्यक्ति बोला– संत जी! अब बताइये, यदि हमारे पास पैसे न होते तो क्या हम नदी पार हो सकते थे? मैंने ठीक ही कहा था न कि धन के बिना गुजारा नहीं।

संत जी बोले– हे भक्तराज! तुम्हारी बात तो ठीक है, किन्तु यह बताओ कि पैसों का त्याग करने से नदी पार हुए या जेब में पैसे रखे-रखे ही नदी पार हो गये? त्याग तो करना ही पड़ा। अभी थोड़ा सा त्याग किया है तो नदी पार हो गये हो, यदि जीवन में त्याग की भावना बनी रही तो इस भवसागर से भी पार हो जाओगे।

त्याग करो– शान्ति पाओ, यह गीता का सूत्र है। यदि जीव केवल श्वास लेता ही रहे और उसे वापिस छोड़े नहीं तो क्या होगा– जय सियाराम हो जायेगा। श्वास पुनः लेना है तो पहले उसे छोड़ना ही पड़ेगा। सोचो, हम केवल खाते ही जाये, खाते ही जायें, पीते ही जायें और मल-मूत्र का त्याग न करें तो क्या होगा? व्यक्ति को नाना प्रकार की बीमारियां लग जायेंगी। शरीर रोगी हो जायेगा। स्वास्थ्य बिगड़ जायेगा। इसके लिए उसे कई प्रकार के उपचार करने पड़ेंगे। अतएव त्याग आवश्यक है।

प्रभु की कृपा से जो भी धन, विद्या, ज्ञान, योग्यता प्राप्त हुई है, उन्हें बांटें और बांटकर शान्ति पायें– धन का दान करने से धन और बढ़ता है, मन को शान्ति मिलती है। आज तो विद्या व ज्ञान को बेचने लग गये हैं, कैसे शान्ति मिलेगी? निःस्वार्थ भाव से जो विद्या व ज्ञान को दूसरों में बांटता है– उसकी विद्या व ज्ञान और भी अधिक बढ़ जाते हैं।

आज का मानव दौड़ रहा है, बस दौड़ रहा है। किसलिए? केवल सुखी होने के लिये। थोड़ा सा सुख प्राप्त करने के लिये जीव कितना कष्ट

उठाता है, कितना अधिक दुःखी होता है। १२-१२, १४-१४ घंटे काम करता है। सुबह जल्दी उठता है, कभी-कभी तो कुछ खाये बिना ही घर से निकल पड़ता है। सारा दिन मशीन की भांति काम करता है और रात्रि में देरी से घर पहुंचता है। थका-हारा न किसी से बात करने को मन चाहता है और न ही कुछ खाने की इच्छा होती है। बस बिस्तर पर पड़ जाता है। समय पर खाता-पीता नहीं। समय पर नींद नहीं ले पाता। परिवार वालों के साथ दो बात करने का समय नहीं। बस दौड़ रहा है, दौड़ रहा है। किसलिये?

कहता है– धन कमाने के लिये। कमाऊंगा नहीं सुखी कैसे होऊंगा? धन के लिए अपने स्वास्थ्य को दांव पर लगा देता है। धीरे-धीरे स्वास्थ्य बिगड़ने लगता है, फिर स्वास्थ्य को सुधारने के लिये बड़े से बड़े अस्पताल में भागता है। धन खर्च करता है। किसलिए? सुखी होने के लिए। कहता है– यदि स्वस्थ नहीं होऊंगा तो कमाऊंगा कैसे? कमाऊंगा नहीं तो खायेंगे कैसे? जीव कमाता है खाने के लिये और खाता है कमाने के लिए– यही दौड़ लगी हुई है, अन्यथा सुखी जीवन के लिए तो बहुत कम चीजों की जरूरत है। पेट भरने के लिये दो-चार रोटी, तन ढकने के लिए वस्त्र और रहने के लिये मकान। ये सब तो भगवान ने सभी को दिया है। वे बड़े दयालू हैं। किसी को भूखा नहीं सुलाते। परन्तु दुःख हमारी खेती है अर्थात् हमारे पाप कर्मों की फसल। भगवान् ने तो सभी को सुखी और स्वस्थ जीवन प्रदान किया है।

प्रत्येक व्यक्ति सुख चाहता है। एक कुंती अम्बा थीं जिन्होंने भगवान श्रीकृष्ण से दुःखों का वरदान मांगा था। यह उस समय की बात है, जब महाभारत का युद्ध समाप्त हो गया। पाण्डवों को राज्य प्राप्त हो गया। युधिष्ठिर जी को राज सिंहासन पर बिठा दिया गया। पाण्डव दुःखों के पहाड़ से मुक्त हो गये थे। उनके जीवन में अब सुख की घड़ी आई थी। उसी समय द्वारिकाधीश श्रीकृष्ण पाण्डवों से विदा लेकर द्वारिका की ओर प्रस्थान करने लगे। कुंती अम्बा से रहा न गया। तत्काल वीरान जंगल में अकेली जाकर खड़ी हो गयीं।

भगवान श्रीकृष्ण रथ पर सवार हो द्वारिका की ओर जा रहे थे। मार्ग में देखा, कुंती बुआ रास्ता रोके खड़ी हैं। प्रभु रथ से नीचे उतरे और आश्चर्य में डूबकर बोले– बुआ! इस समय सुनसान जंगल में, अकेली यहां क्यों खड़ी हैं? कुंती अम्बा के नेत्रों में अश्रु थे। प्रभु बोले– बुआ! आप रो क्यों रही हैं?

कुंती– प्रभु! आप हमें छोड़कर जा रहे हैं? नहीं, नहीं, द्वारिकाधीश! इस प्रकार मेरे पुत्रों को छोड़कर मत जाइये। आपके बिना हमारा कौन है? प्रभु बोले– बुआ! अब तो सब कुछ ठीक हो गया है। तुम्हारे दुःख के बादल छंट गये हैं। अब तुम राज्य का सुख भोगो। मुझे द्वारिका पहुंचना है, वहां और भी कार्य करने हैं, अतः मुझे जाने दो। मेरा रास्ता मत रोको, बुआ।

कुंती अम्बा हाथ जोड़कर रोते हुए बोलीं– ठीक है प्रभु! मैं आपको नहीं रोकूंगी, किंतु जाने से पहले मुझे एक वरदान देते जाईये। वरदान? अवश्य। तुम जो भी मांगोगी, मैं अवश्य तुम्हें दूंगा। क्योंकि तुम केवल मेरी बुआ ही नहीं, मेरी परम भक्त भी हो। अतः मांगो, क्या चाहिए तुम्हें वरदान स्वरूप, प्रभु बोले। कुंती जी ने कहा– हे प्रभु! मुझे असहनीय दुःखों का वरदान देते जाओ। प्रभु सुनकर हैरान रह गये। पूछा– बुआ! यह क्या मांग रही हैं आप? आज तक ऐसा वरदान तो किसी ने नहीं मांगा। हर मानव सुख चाहता है। तुम्हारे पुत्रों पर तो दुःखों के पहाड़ टूटे हैं। आज वर्षों पश्चात उन्हें सुख प्राप्त हुआ है। क्या दुःखों से तुम्हारा जी नहीं भरा? अब क्यों दुःख चाहती हो बुआ?

कुंती अम्बा ने सजल नेत्रों से कहा– हे प्रभु! दुःख में आपकी याद आती है और जब आपकी

याद आती है, आप सदैव हमारे पास आते हैं। मेरे पुत्रों पर जब-जब भी कोई संकट आन पड़ा है, कैसा भी पहाड़ जैसा दुःख आया, तब-तब आपने पग-पग पर उनकी रक्षा की। हर दुःख को सहने की शक्ति दी। हे कृष्ण! आज जब उन्हें थोड़ा सा सुख मिला तो आप हम सभी को छोड़कर जा रहे हैं। ऐसा सुख हमारे किस काम का? हे प्रभु! मुझे वो सुख प्रिय नहीं, जो आपसे वियोग करा दे, अपितु मुझे तो वो हर दुःख प्रिय है जो आपसे संयोग करा दे। अतः जाने से पूर्व मुझे दुःखों का वरदान देते जाइये। इतना कहते-कहते कुंती अम्बा प्रभु के श्रीचरणों में लोट पड़ीं और रोने लगीं।

भगवान ने कुंती जी को उठाया और अपने हृदय से लगाकर कहा– हे बुआ! मैं सदा तुम्हारे पास रहूंगा, क्योंकि मैं अपने भक्तों से कभी दूर जा ही नहीं सकता। आज मैं तुम्हें अनन्य प्रेमाभक्ति का वरदान देता हूं। तुम्हारा चित्त सदा मेरे चरणों में लगा रहेगा। इतना कहकर प्रभु द्वारिका की ओर चल पड़े।

कुंती अम्बा का चित्त तब से श्रीकृष्ण में ही लगा रहा और कृष्ण-कृष्ण करते-करते ही उनके प्राण छूटे। कहने का भाव– प्रभु-प्राप्ति का सुख ही अक्षय सुख है, जिस सुख का कभी नाश नहीं होता। गीता में कहा है–

**स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते।**
**(५/२१)**

अर्थात् संसार के सुख आदि-अन्त वाले हैं किंतु भगवद्-प्राप्ति का सुख परम सुख है। परम सुख ही जीव को परमानन्द की प्राप्ति कराता है। जिस आनन्द का कभी नाश नहीं होता, जो अविनाशी होता है। ऐसा आनन्द अखण्ड शान्ति प्रदान करता है। शान्ति प्राप्ति का दूसरा सूत्र है– ज्ञान के द्वारा शान्ति कैसे मिले? इसकी चर्चा अगले अंक में करेंगे। **क्रमशः**


परम पिता परमेश्वर की असीम अनुकम्पा से

**श्रीमती निर्मला देवी धर्मपत्नी श्री जैमल सिंह (सुपुत्र स्व. श्री जैड.आर. चौधरी)**

अपने निवास स्थान पर

# श्रीमद्भागवत महापुराण कथा ज्ञान-यज्ञ

का आयोजन किया जा रहा है।

**कथावाचक : ज्योतिर्विद पंडित गौरीदत्त शर्मा (गीतारत्न)**

(सैन्य प्रशस्ति पत्र प्राप्त आचार्य, गीता आश्रम, दिल्ली कैंट)

## सोमवार, 2 जून से रविवार, 8 जून 2014 तक

**कथा स्थल : ग्राम लाहारी, पो. कोट्लू, तहसील- जैसिंहपुर, वाया लाम्बा गांव, जिला कांगड़ा (हिमाचल प्रदेश) - 176096**

कथा ज्ञान यज्ञ में प्रतिदिन प्रातः 7.00 बजे से 8.00 बजे तक योगाभ्यास, प्रातः 8.00 बजे से 10.00 बजे तक पूजन हवन, प्रातः 10.00 से दोपहर 12.00 बजे तक पारायण, दोपहर 2.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक प्रवचन, प्रतिदिन सायं 6.00 बजे आरती। दिनांक 8 जून प्रातः 8.00 हवन तदुपरान्त दोपहर 1.00 बजे से भण्डारा।

**आप सभी ईष्ट मित्रों एवं परिवार सहित सादर आमंत्रित हैं।**

**सम्पर्क : 9818284090 (जैमल सिंह) 9810159232 (रवि सिंह)**

# रामः शस्त्रभृतामहम्

श्रेयानन्द

**'अग्रश्चः चतुर्वेदः पृष्ठश्च सशर धनुः।**
**इदं ब्राह्मं इदं क्षात्रं शास्त्रादपि शरादपि।।**

चारों युगों में सतयुग की उत्पत्ति कार्तिक शुक्ल नवमी बुधवार को हुयी। चार अवतार हुए। मत्स्य, कच्छप (कूर्म) वाराह व नृसिंह। ये विकासवाद के अनुसार क्रमशः विकसित स्वरूप हैं। त्रेता युग की उत्पत्ति वैशाख शुक्ल ३, अक्षय तृतीया सोमवार को हुयी। इसमें क्रमशः वामन, परशुराम व श्रीराम के अवतार भी क्रमशः विकासवाद पर ही आधारित हैं। वामन बाल लघु रूप हैं। परशुराम पूर्ण पुरुष हैं- अधिक सृजनात्मक, विध्वंसात्मक कम।

श्रीराम दोनों ही हैं, किंतु मर्यादा की सीमा में सीमित व द्वापर युग का आरम्भ माघ कृष्ण ३०, मौनी अमावस्या शुक्रवार को हुआ। इसमें अवतार हुये बलराम व श्रीकृष्ण। 'केशवधर हलधर रूप ओम जय जगदीश हरे।' गर्गाचार्य जी ने नामकरण किया बलराम-संकर्षण।

**अयं हि रोहिणी पुत्रो रमयन सुहृर्दो गुणैः।**
**आख्यास्ते राम इति बलाधिक्यात बलंविदुः।**
**यदुनां पृथक भावात् संकर्षणमुशन्युते।।**

श्रीकृष्ण गायत्री अनुसार श्रीकृष्ण आत्मा, प्रद्युम्न बुद्धि, मन अनिरूद्ध तथा अहंकार संकर्षण हैं।

**ॐ नमो भगवते तुभ्यं वासुदेवाय धीमहि।**
**प्रद्युम्नाय अनिरुद्धाय नमः संकर्षणाय च।।**

**'चैते अंशकलां पुषां कृष्णस्तु भगवान स्वयं'**– सारे अवतार हैं। कृष्ण अवतारी हैं। और भगवान राम ही कृष्ण हैं। ऐसा भी कहना अनुपयुक्त व अतिश्योक्ति नहीं है।

भगवान श्रीकृष्ण जी ने गीता दशमाध्याय के ३१वें श्लोक में बताया कि पवित्र कारकों में पवन, शस्त्रधारियों में राम, मछलियों में मगरमच्छ तथा नदियों में गंगा उनकी दिव्य विभूतियां हैं। यद्यपि ब्रह्म एक ही है। तथापि लीला करने हेतु अनेक रूप धारण करता है। अतः यहां परशुराम, श्रीराम, बलराम रूप से तीनों ही परम पराक्रमी शस्त्रधारी होने से तीनों के लिए ही शस्त्रधारी राम शब्द उपयुक्त है। यद्यपि अस्त्र-शस्त्र में भेद होने से किस स्वरूप के प्रति यह सटीक है, कहना कठिन है। अस्त्र धनुष से बाण फेंका जाता है जो श्रीराम धनुर्धारी के साथ संगत अधिक है। शस्त्र हाथ से फेंका नहीं जाता, प्रहार किया जाता है। अतः परशुराम के साथ संगत अधिक है। भगवान परशुराम परशु के साथ धनुष बाण भी धारण करते हैं। बलराम हल मूसल व गदा धारण करते हैं। जो सभी शस्त्र हैं। अतः भगवान की विभूतियों में भेद दृष्टि रखना उचित नहीं है।

**'बन्दउं राम नाम रघुवर को।**
**हेतु कृसानु भानु हिमकर को।।'**

अर्थात् राम परब्रह्म परमेश्वर ही रघुवंशीय राम हैं। जोकि अग्निवंश में अवतरित होकर परशुराम, भानुवंश में अवतरित श्रीराम तथा चन्द्रवंश में अवतरित होकर बलराम हैं। बल की अधिकता के कारण बलराम हैं, जो सबमें रमे हैं। गर्गाचार्य जी ने श्रीकृष्ण के नामकरण समय कहा–

**'आसन्न वर्णास्त्रयो ह्यस्य ग्रहणीतोतनुः युगे।**
**शुक्लो रक्तास्तथा पीतो इदानीं कृष्णताम् गतः।।'**

अर्थात् यह हर युग में जन्मता आया है। पहले शुक्ल रक्त पीत वर्ण धारण करके, अब कृष्ण वर्ण होकर प्रकट हुआ। अतः यह कृष्ण ही वामन, परशुराम, राम, बलराम होकर कृष्ण हुआ। इस प्रकार कृष्ण की दिव्य विभूतियों में

शस्त्रधारी परशुराम, श्रीराम व बलराम एक ही हैं, क्योंकि परब्रह्म परमेश्वर है। तथापि वर्ण (रंग) भेद व वर्णाश्रम भेद से, अवतार कालभेद से, परशुराम प्रथम हैं। तभी श्रीराम उन्हें सादर निवेदन करते हैं–

**विप्र बंश कै असि प्रभुताई।**
**अभय होय जो तुम्हहिं डेराई।।**

बाल्मीकि रामायण अनुसार श्रीराम जी ने परशुराम जी का पूजन किया।

**रामं दाशरथि रामो जामदग्न्यः प्रपूजितः।**
**ततः प्रदक्षणीकृत जगामात्मगतिं प्रभुः।।**
**(बा.रा.बा. ७६/२४)**

**सर्वशस्त्र पारंगत परशुराम 'जमदग्नि सुतो वीरः सर्वशस्त्र भृतांवरः हैं।**
**(महा.उ.पर्व १७६/३४)**

भगवान परशुराम अग्रभाग से चारों वेदों के ज्ञाता सर्व शास्त्रज्ञ होकर, कंधे पर धनुष, परशु धारण करके सर्वशस्त्रधारियों में श्रेष्ठ, क्षत्रियों से श्रेष्ठ, क्षात्रधर्म प्रणेता हैं। भीष्म, द्रोण, कर्ण, कृष्ण, बलराम के गुरु हैं।

**सर्वज्ञान विप्रं सर्वशस्त्र भृतां वरम्।**
**ब्राह्मणेभ्यस्तदा राजन् दित्सन्त वसु सर्वशः।।**
**(महा. आदि पर्व १२६/५१)**

भगवान श्रीराम, भगवान परशुराम जोकि–

**'वृषभ कन्ध अरु बाहु विशाला।**
**चारू जनेऊ माल मृगछाला।।**

हैं, विनम्र श्रीराम निवेदन करते हैं–

**देव एक गुन धनुष हमारे।**
**नौ गुण परम पुनीत तुम्हारे।।**
**सब प्रकार हम तुम सन हारे।**
**छमिय नाथ अपराध हमारे।।**

यह नौगुण गीता (१८/४२) में वर्णित हैं–

**शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।**
**ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्।।**

अर्थात् अन्तःकरण का निग्रह, इन्द्रियदमन, तप, शुचिता, क्षमा भाव, सरलता, आस्तिक श्रद्धा भाव, ज्ञान, विज्ञान ये नौ स्वाभाविक गुण कर्म ब्राह्मण के हैं।

श्रीमद् भागवत पुराण (९/५/३३) में परशुराम जी को शस्त्रधारी शिरोमणि कहा गया है–

**अथार्जुनः पंचशतेषु बाहुभिर्धनुषु बाणान युगपतस सन्दधे।**
**रामाय रामोऽस्त्र भृतां समग्रणी स्तान्येक धन्वेषुभिराच्छिनत समम्।।**

भगवान् परशुराम त्रेता युग में अवतरित होकर द्वापर में श्रीकृष्ण, बलराम, भीष्म, द्रोण, कर्ण को शिक्षा देकर कलियुग में भी हैं। अतः शस्त्रधारियों में प्रथम परशुराम जी ही हैं।

**'अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमानश्च विभीषणः।**
**कृपा परशु रामश्च सप्तैता चिर जीविनः।।'**

अक्षय तृतीया स्वयं सिद्ध मुहूर्त है। राजस्थान में तो इस दिन को अबूझ मुहूर्त मानकर ब्याह होते हैं। परशुराम महादेव तीर्थ यही है। परशुराम महादेव का दर्शन करने वाला ही बद्रीनाथ केदारनाथ के पट अक्षय तृतीया को खोलता है। भगवान महादेव व परशुराम का भक्त होकर बलवान बनना लक्ष्य हो।

**वैशाखि धीरनि किउ वाढीआ जिना प्रेम बिछोहु।**
**हरि साजन पुरखु विसारि कै लगी माइया धोहु।।**
**पुत्र कलत्र न संगि धना हरि अविनासी ओहु।**
**पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु।।**
**नानक की प्रभु बेनती प्रभु मिलहु परापति होइ।**
**वैसाखु सुहावा तां लगै जा संत भैंट हरि सोइ।।**
**(गुरुवाणी)**

# देवी भागवत : श्री जगदम्बिकायै नमः

● जैमल सिंह

गतांक से आगे...

तुम स्त्री हो या पुरुष, ये रहस्य भी मुझे कृपा करके बतलायें। ब्रह्मा जी कहते हैं जब मैंने विनयपूर्वक मां भगवती से स्थिति पूछी तब देवी ने बताया मैं और ब्रह्मा एक ही हैं, हममें किचिंतमात्र भी भेद नहीं है। केवल बुद्धि के भ्रम से भेद प्रतीत होता है। हम लोगों के सूक्ष्म भेद को जो जानता, वही जानता है। उसकी मुक्ति निश्चित है। इस सारे संसार में मैं ही एक व्यापक रूप से विराजमान हूं। मैं शक्तिधारण करके पराक्रम करती हूं। गौरी, ब्राह्मी, रौद्री, वाराही, वैष्णवी, शिवा, वारुणी, कौबेरी, नरसिंही तथा वासवी मेरे ही रूप हैं। यदि मेरी शक्ति हट जाये तो संसार में कोई भी हिल-डुल नहीं सकता। सभी मेरी शक्ति के संयोग से ही सफलता पाते हैं। शक्ति के प्रयाण कर जाने से सब प्राणी निष्प्राण हो जाते हैं। जो विष्णु है वही शिव है, जो शिव है वही साक्षात् श्रीहरि हैं। इनमें भेदभाव रखने वाला मनुष्य नरक में जाता है। ऐसे ही ब्रह्मा जी के बारे में सोचना चाहिए। मां ने सभी देवताओं को शक्तियों सहित अपना-अपना काम करने को कहा तथा दिक्कत के समय पर याद करने के लिये वचन दिया। मैं सामने आ जाऊंगी इस प्रकार वचन देकर भगवती जगदम्बिका ने सब देवताओं को विदा किया। शक्तियों में भगवान विष्णु के लिये महालक्ष्मी, शंकर के लिये महाकाली और ब्रह्मा के लिये सरस्वती को पत्नी बनने की आज्ञा दे दी। यात्रा काल में हमारे विमान पर चढ़ते ही वह सारा दृश्य अदृश्य हो गया। हम कमल के पास पहुंच गये, वहां पर सिर्फ जल ही जल था और मधु-कैटभ दानव श्रीहरि के हाथों काल के ग्रास बन चुके थे।

ब्रह्मा, विष्णु, महेश ने जब अनुपम देवी के दर्शन किये तब वही छिपे रूप में बहुत सी देवियों के भी दर्शन हुए। नारद जी यह जानकर बड़े प्रसन्न हुए। तब उन्होंने फिर ब्रह्मा जी से पूछा- पिताजी, मैं त्रिगुण शक्ति के दर्शन तो कर चुका अब निर्गुण शक्ति कैसी है बतायें। तब ब्रह्मा जी के मुख से सत्यवाणी निकली। उन्होंने कहा- निर्गुण का रूप इन आंखों से नहीं देख सकते, उसके लिए ज्ञानरूपी चक्षु चाहिए। प्रकृति और पुरुष को अजन्मा समझना चाहिए। प्राणियों में जो चेतना है उसी को परमात्मा समझो, जो शक्ति है उसी को परमात्मा समझो और परमात्मा को ही शक्ति समझो। इसमें कोई भेद नहीं है। पर आपको सगुण परमात्मा की ही आराधना करनी चाहिए। जिसे जानकर मेरा भ्रम कट जाये, वही ज्ञान दीजिये। ज्ञान शक्ति का सात्विक अहंकार से, क्रिया शक्ति का राजस अहंकार से, द्रव्य शक्ति का तामस अहंकार से संबंध है। तामसी द्रव्य शक्ति से शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, आकाश का गुण शब्द, वायु का गुण स्पर्श, अग्नि का रूप, जल का रस तथा पृथ्वी का गुण गंध है। नारद जी संक्षेप में यह समझ लेना चाहिए कि द्रव्य शक्ति से संबंध रखने वाले ये दशों पदार्थ जब प्रकट होते हैं तो इन्हें तामस अहंकार वाली सृष्टि कहा जाता है।

कान, त्वचा, जीभ, आंख और नासिका- ये पांच ज्ञानेन्द्रियां तथा वाणी, हाथ, पैर, उपस्थ और गुदा- ये पांच कमेन्द्रियां तथा प्राण, अपान, व्यान, समान और उदान (पंच प्राण) सभी क्रिया शक्ति से ही उत्पन्न होते हैं। प्रगट हुए इन १५ को राजस सृष्टि कहते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, तृष्णा, द्वेष, राग, मद, असूया, उपया, ईर्ष्या, आदि

सभी शरीर के विकार हैं, जब तक ये बाहर नहीं होते तब तक जीव का कल्याण नहीं होता। मन के विकारों को दूर करना परम आवश्यक है। शास्त्र के अध्ययन से सत्व गुण बढ़ता है। तमोगुण तथा राजस पर रोक लग जाती है। सत्वगुण की वृद्धि होती है। तब मन में धार्मिक कार्य करने की भावनायें पैदा होती हैं। राजसी श्रद्धा के उदय होने पर धन बढ़ाने और भोगों में लिप्त रहता है। सत्व और रजोगुण बढ़ने पर तामस दब जाता है अर्थात् सभी गुण एक-दूसरे के जनक हैं।

बचपन में नाक, कान, आंख सभी इन्द्रियां छोटी रहती हैं। अंत:करण साफ, निर्मल, विषयों की तरफ नहीं भागता। उस समय सत्वगुण की प्रधानता होती है। जवानी में जब शरीर में रजोगुण प्रधान होता है तो उसे चंचल बना देता है। नींद नहीं आती, काम विकार आ जाता है। सत-असत रूप इस सारे संसार की सृष्टि है, ये महामाया ही करती है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश ये सारे देवता सूर्य, चन्द्रमा, आशु गण, वसुगण सभी देवतागण इस शक्ति से सम्पन्न होने पर ही अपने कार्य का सम्पादन करते हैं। वे परमेश्वरी (महामाया) ही जगत की कारण हैं। आप उनका ही भजन पूजन करें। वे ही महाकाली, महालक्ष्मी और महा सरस्वती हैं। सम्पूर्ण प्राणियों की अधिष्ठात्री हैं, वे समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाली हैं। शान्तस्वरूपा, दयालू हैं केवल नाम उच्चारण से वे अभीष्ट वस्तु प्रदान कर देती हैं।

ब्रह्मा, विष्णु, महेश ने भी पूर्व काल में उनकी उपासना की है। दया से ओत-प्रोत रहने वाली माता अशिक्षितों को भी विद्वान बना देती हैं।

कौशल देश में एक देवदत्त नामक ब्राह्मण रहता था। उसने पुत्र प्राप्ति के लिये पुत्रेष्टि यज्ञ करने के लिये वेदनिपुण ब्राह्मण बुलाये। तमसा नदी के तट पर यज्ञ-मंडप बना, विद्वान ब्राह्मणों ने विधिपूर्वक वेदी बनाई। देवदत्त ने उस यज्ञ में मुनिवर सुहोत्र को ब्रह्मा, याज्ञवल्क्य को अध्वर्यु, बृहस्पति को होता, पैल को प्रस्तोता, गोभिल को उद्गाता तथा उपस्थित मुनियों को सदस्य बनाकर उन्हें विधिवत दान-दक्षिणा दी। सामवेद का गान करने वाले मुनिवर गोभिल उद्गाता होकर सातों स्वरों के साथ रथन्तर मात्र का उच्चारण कर रहे थे। स्वरित स्वर से मन्त्र गायन हो रहा था। बार-बार श्वास लेने से मंत्रोच्चारण करते समय उनका स्वर भंग हो गया, तभी देवदत्त जी ने कुपित होकर गोभिल से कहा- मुनिवर तुम बड़े मूर्ख हो। इससे गोभिल ने उन्हें श्राप दे दिया- तुम्हें मूर्ख पुत्र प्राप्त होगा। तब देवदत्त ने कहा- मूर्ख पुत्र से तो न होना ही अच्छा है। पितृ कार्य तथा देव कार्य के अवसर पर फल की इच्छा करने या चाहने वाले पुरुष को मूर्ख ब्राह्मण को कोई आसन न दे। बिना ब्राह्मण के श्राद्ध यज्ञ भले ही कर ले पर मूर्ख ब्राह्मण को न बुलावे, यह शास्त्र की आज्ञा है। वेदज्ञ ब्राह्मण जिसका अन्न खाते हैं उसके पितृ हमेशा स्वर्ग में प्रसन्न रहते हैं। आप तो बड़े प्रकाण्ड विद्वान हैं, आपने क्यों ऐसा श्राप दिया। अब प्रभु कृपा करो, जिससे मेरा पुत्र फिर से विद्वान हो जाये। महात्मा का क्रोध पल में ही शांत हो जाता है अत: गोभिल जी ने कहा- आपका पुत्र मूर्ख होकर फिर बुद्धिमान हो जायेगा। आग का स्वभाव है जल को गर्म कर देना पर जब आंच बंद कर दी जाये तो फिर जल शीतल हो जाता है। यही बात देवदत्त के साथ हुई। गोभिल जी प्रसन्न हो गये। उन्होंने यज्ञ की पूर्णाहुति की। समय पर देवदत्त जी की पत्नी को पुत्र हुआ जो कुछ समय तक मूर्ख रहा बाद में बाल्मीकि जी की तरह प्रकाण्ड विद्वान हो गया। यह समाचार पाकर जिन पिता ने उतथ्य को त्याग दिया था वे आश्रम-आश्रम गये तथा बड़े आदर के साथ मुनि उतथ्य को घर लौटा लाये। अत: उस आदि शक्ति की भक्तिपूर्वक सदा उपासना करनी चाहिए। वे पराशक्ति ही सारे जगत की कारणभूता हैं।

**क्रमश:**

# सुख और शान्ति गीता के द्वारा

वीरेन्द्र कुमार शुक्ला

गतांक से आगे....

अपनी बुद्धि से समर्थित सिद्धांत की उपलब्धि या प्रशंसा से जो सुख होता है वह वास्तव में भोग है। शास्त्रनिषिद्ध भोग तो सर्वथा त्याज्य हैं ही, पर शास्त्र समर्थित भोग भी परमात्म प्राप्ति के बाधक होने के कारण त्याज्य ही हैं। इसका कारण है कि भोग के लिये जड़ पदार्थों से सम्बंध होना आवश्यक है तथा परमात्म प्राप्ति के लिये जड़ता से सम्बंध विच्छेद होना आवश्यक है। भोगों को प्राप्त करना अपने वश की बात नहीं है, क्योंकि इसमें प्रारब्ध की प्रधानता और अपनी परतंत्रता रहती है। परन्तु भगवान की प्राप्ति प्रत्येक मनुष्य कर सकता है क्योंकि उसकी प्राप्ति के लिये ही यह मानव शरीर मिला है। अपने चरम लक्ष्य की प्राप्ति वास्तविक सुख है, जिसके लिये नाशवान सुख का त्याग आवश्यक है। भोगों को देने वाला ये संसार वास्तव में दुखरूप ही है, इसका वियोग ही परमात्म योग का वास्तविक सुख है। कामना और ममता से रहित होकर कर्तव्य पालन करने से संसार का वियोग हो जाता है, और योग की प्राप्ति हो जाती है।

**तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं योगसञ्ज्ञितम्।**
**स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा।।**
**(गी.अ. ६/२३)**

सुख भी तीन प्रकार का होता है– सात्विक, राजसिक तथा तामसिक।

**सुखं त्विदानीं त्रिविधं श्रृणु मे भरतर्षभ।**
**अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति।।**
**(गी.अ. १८/३६)**

**यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।**
**तत्सुखं सात्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम्।।**
**(गी.अ. १८/३७)**

सात्विक सुख जड़ता से सम्बंध विच्छेद करा देता है। इस सात्विक सुख में भी यदि आसक्ति न रहे तो वह उससे भी ऊंचा उठकर अक्षय सुख का अनुभव कराकर परमात्मतत्व की प्राप्ति कराता है। यही परम शान्ति की अवस्था है। सत्संग, स्वाध्याय, संकीर्तन, जप, ध्यान चिन्तन आदि में जो सुख है, वह मान, बड़ाई, आराम, धन उपलब्धि, भोग, आदि विषयेन्द्रियों के सुख का सम्बंधी नहीं है। उसका सम्बंध तो परमात्मतत्व की प्राप्ति के अक्षय सुख से है। जो सुख विषयों से उत्पन्न होता है वह आरम्भ में तो अमृत की तरह लगता है पर परिणाम में विष की तरह कष्टदाई होता है, ऐसा सुख राजस कहा गया है।

**विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम्।**
**परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम्।।**
**(गी.अ. १८/३८)**

निद्रा, आलस्य और प्रमाद से उत्पन्न होने वाला सुख आरम्भ और परिणाम में व्यक्ति को मोहित करने वाला होता है। ऐसा सुख तामसिक सुख कहलाता है।

**यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः।**
**निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम्।।**
**(गी.अ. १८/३९)**

जब राग और अधिक बढ़ जाता है तब वह तमोगुण का रूप धारण कर लेता है जिसे मोह भी कहते हैं। इस अवस्था में व्यक्ति को सोना अच्छा लगता है। परिणाम में तन्द्रा, स्वप्न, समय की बरबादी आदि मिलते हैं। मन में संसार का फालतू चिन्तन बढ़ जाता है, तथा अशान्ति, शोक, विषाद, चिन्ता, दुःख आदि बढ़ते हैं। जब और अधिक तमोगुण बढ़ता है तब व्यक्ति

प्रमाद में प्रवेश कर जाता है। प्रमाद का होना दुखों का आमंत्रण है। यह प्रमाद भी दो तरह का होता है। अक्रिय प्रमाद और सक्रिय प्रमाद। घर, परिवार, शरीर आदि से सम्बंधित कर्तव्यों को न करना तथा निठल्ले बैठे रहना ये सब अक्रिय प्रमाद हैं। व्यर्थ क्रियायें करना जैसे देखना, सुनना, सोचना, नशाहार, खेल तमाशा, जुआ आदि दुर्व्यसन, चोरी, डकैती, झूठ, कपट, बेईमानी, व्यभिचार आदि दुराचार सक्रिय प्रमाद हैं। इनके आचरण में भी लक्ष्य सुख प्राप्ति का ही होता है जो तामसिक सुख कहा जाता है। यह तामिकी सुख विवेक को जाग्रत नहीं होने देता। राग और विवेक में विरोधाभास है। राग विवेक को जाग्रत नहीं होने देता और विवेक के जाग्रत होने पर राग दब जाता है।

परमात्मा निरन्तर सत्तारूढ़ होने के कारण उसे 'सच्चिदानन्द' कहते हैं। निरन्तर सत्तास्वरूप होने के कारण वह 'सत्' कहा जाता है, निरन्तर ज्ञानस्वरूप होने के कारण वह 'चित्' कहा जाता है तथा निरन्तर आनन्दस्वरूप होने के कारण वह 'आनन्द' कहा जाता है। उसी सच्चिदानन्द परमात्मा का अंश होने के कारण मनुष्य भी सच्चिदानन्दस्वरूप ही है। परन्तु जब वह असत् (नाशवान) वस्तुओं की इच्छा करता है, तब उस इच्छा से उसका स्वतः स्वाभाविक आनन्द ढक जाता है। जब असत् वस्तुओं की इच्छा और राग मिट जाते हैं या त्याग दिये जाते हैं तब स्वाभाविक सुख प्रगट हो जाता है। अन्तःकरण से उत्पन्न सुख वस्तु से प्राप्त मान लिया जाता है। वास्तव में यह अनित्य और नाशवान ही है। जैसे निद्रा में वस्तु का त्याग रहता है पर सुख वास्तविक रहता है। सुख की इच्छा अथवा ममता का त्याग हो जावे, अथवा भगवान से सच्ची आत्मीयता हो जावे तो परम शान्ति का अनुभव हो जाता है। भगवान सम्पूर्ण यज्ञों और तपों के भोक्ता हैं, सम्पूर्ण लोकों के महान ईश्वर और हमारे सुहृद और हितकारी हैं, इन तीन बातों में से यदि एक को भी दृढ़ता पूर्वक मान लिया जावे तो परम शान्ति प्राप्त हो जाती है। संसार में एक दूसरे के साथ संयोग होता है, और परमात्मा के साथ योग होता है। योग का कभी वियोग नहीं होता और सांसारिक संयोग का वियोग निश्चित है। परमात्मा का वियोग और संसार का योग कभी सम्भव नहीं है। दुःखरूप असत् संसार के साथ माने हुए संयोग का वियोग अर्थात् सम्बंध होते ही नित्ययोग का अनुभव हो जाता है तथा समता की स्थिति आ जाती है जिससे परम शान्ति और परम सुख की प्राप्ति हो जाती है।

दुःखों का कारण केवल सुख की आसक्ति है। परिस्थिति दुख का कारण नहीं हो सकती, क्योंकि वह एक भी क्षण टिकती नहीं है बदलती रहती है। अन्य प्राणी दुख का कारण नहीं हो सकता, क्योंकि वह हमारे पापों का नाश करता है और आगे विकास करता है। संसार भी दुःख का कारण नहीं हो सकता क्योंकि उसमें परिवर्तन हमारे विकास के लिये होता है। बिना परिवर्तन के विकास सम्भव ही नहीं है। रज-वीर्य से शरीर का बनना, बालक से जवान बनना, अज्ञानी से ज्ञानी बनना, सब स्वभाविक परिवर्तन विकास के लिये ही हैं। परिवर्तन के बिना संसार एक अचल चित्र की तरह ही होता है। भगवान भी दुख के कारण नहीं हो सकते क्योंकि वे आनन्दस्वरूप हैं। उनके यहां दुःख है ही नहीं। अतः सुख बुद्धि होना और उसकी इच्छा करना ही दुख का मूल कारण है। इसीलिये विवेकी मनुष्य यह निश्चय कर लेता है कि जो वस्तु और व्यक्ति सदा उसके साथ नहीं रहने वाले, उनके बिना वह सदा के लिये प्रसन्नता से अवश्य रह सकता है।

## सुप्रसिद्ध संत ब्रह्मलीन श्री रामचन्द्र केशव डोगरे जी महाराज द्वारा श्रीमद्भागवत् महापुराण पर दिव्य विवेचना

# एकादश एवं द्वादश स्कन्ध की विवेचना

गतांक से आगे....

श्रीकृष्ण-उद्धव, अब तुम अलकनंदा के किनारे व द्वारिकाश्रम में रहकर इन्द्रियों को संयमित करके ब्रह्मज्ञान का चिंतन करो। अपना मन मुझी में स्थिर करना। वैसा करने पर तुम मुझे प्राप्त कर सकोगे। बदरिकाश्रम योगभूमि है, वहां प्रभु की प्राप्ति शीघ्र होती है।

उद्धव जी– प्रभु, आप भी मेरे साथ चलिए। भगवान– उद्धव मैं इस शरीर के साथ तो अब वहां जा नहीं सकता। मैं चैतन्य स्वरूप से तुम्हारे हृदय में ही हूं। तुम्हारा साक्षी हूं। सो चिंता न करना। जब तुम आतुरता और एकाग्रता से मेरा स्मरण करोगे, मैं उपस्थित हो जाऊंगा। अन्यथा वैसे तो अकेले ही आना-जाना है।

जगत में सभी जानते हैं कि अकेले ही जाना है, फिर स्त्री-पुरुष एक दूसरे में आसक्ति क्यों रखते हैं। इस संसार के सभी संबंध मिथ्या हैं, असत्य हैं। एक श्रीमंत नगरसेठ का जवान पुत्र रोज एक महात्मा की कथा सुनने को जाता था किंतु समय से पहले उठकर चला आता था। तो महात्मा ने एक दिन उससे ऐसा करने का कारण पूछा।

युवक ने कहा– महाराज, मैं अपने माता-पिता का एकमात्र पुत्र हूं। यदि घर लौटने में कुछ देरी हो जाये तो वे मुझे ढूंढ़ने निकलते हैं और मेरी पत्नी भी मेरे लिए प्राण बिछाती है। आप संसारियों के संबंध को मिथ्या बताते हैं किंतु आपको कोई अनुभव तो है नहीं।

महात्मा– यदि ऐसा ही है तो हम उनके प्रेम की परीक्षा क्यों न कर देखें? यह जड़ी-बूटी तू खा ले तेरा शरीर गर्म हो जायेगा। मैं उपचार करने आऊंगा, फिर जो वहां होता जाये वह तू देखते रहना। उस युवक ने महात्मा के आदेश का पालन किया। उसका शरीर एकदम गरम हो गया। माता-पिता ने घबड़ाकर कई डॉक्टरों को, वैद्यों को बुलाया किन्तु उनके उपाय कारगर न रहे। युवक की पत्नी भी कलप रही थी। इतने में वह महात्मा आ पहुंचे। सभी ने उनसे पुत्र के इलाज की प्रार्थना की। महाराज ने चिकित्सा करते हुए कहा, किसी ने जादू-टोना कर दिया है। मैं उपाय कर सकता हूं। उन्होंने एक बर्तन में पानी मंगवाया और उसे पुत्र के मस्तक पर से उतारकर कहा, मैंने मंत्रशक्ति से उस जादू-टोने को इस पानी में उतार लिया है। अब यदि इस युवक को बचाना है तो यह पानी किसी को पीना होगा। सभी ने एक साथ पूछा– महाराज, किन्तु इस पानी को पीने वाले की क्या दशा होगी? महात्मा बोले– वह शायद मर भी जाये, किन्तु वह युवक बच जायेगा। सो तुम में से कोई यह पानी पी जाओ। युवक की माता ने कहा– मैं तो अपने लाड़ले के प्राण बचाने के लिये यह पानी पीने को तैयार हूं किन्तु मै पतिव्रता हूं। मेरी मृत्यु के बाद इस वृद्ध पति की सेवा कौन करेगा? युवक के पिता ने कहा– मैं यह पानी पी तो लूं किन्तु मेरी मृत्यु के बाद इस बेचारी मेरी पत्नी की क्या दशा होगी? वह मेरे बिना जियेगी ही कैसे?

महात्मा ने विनोद किया– तुम दोनों आधा-आधा पानी पी लो, दोनों के सभी क्रिया-कर्म एक साथ हो जायेंगे। **-क्रमशः**

# तुलसी : कुछ चिकित्सीय प्रयोग

मूत्र संबंधी रोगों, स्त्रियों के मासिक धर्म अधिक-कम या अनियमित होने पर एवं प्रदर बीमारी में इसका प्रयोग लाभप्रद है।

कफ, खांसी, ज्वर, जुकाम, मलेरिया, बुखार इत्यादि में तुलसी का प्रयोग रामबाण औषधि है। अनेक आयुर्वेदिक औषधियों में तुलसी का सम्मिश्रण अधिक लाभप्रद माना गया है। उदर रोग जैसे- अजीर्ण, अपच, दस्त, पेट दर्द, मंदाग्नि एवं पेट में कीड़े पड़ने पर तुलसी का प्रयोग लाभदायक है। बच्चों की बीमारी में जैसे शीतला निकलने पर, मुंह से दूध निकलने, दांत निकलने पर खांसी, जुकाम, बुखार होने पर तुलसी का प्रयोग लाभदायक है। फोड़ा, फुंसी, घाव, चर्मरोग, दाद, खुजली, मुंहासे, झांइ, बिच्छू एवं ततैया के काटने पर तुलसी फायदा पहुंचाती है। नकसीर आने पर तुलसी के रस में कपूर मिलाकर कुछ बूंदे नाक में टपका देने पर लाभ होता है। आंख, कान, नाक, दांत, सिर दर्द इत्यादि यहां तक कि गठिया या जोड़ों के दर्द में तुलसी का बाह्य उपचार लाभ पहुंचाता है।

तुलसी का सेवन विटामिन ए, बी, सी की पूर्ति करता है। बालों के असमय झड़ने पर तुलसी एवं आंवला के चूर्ण को पानी में उबालकर सिर धोने से बालों का झड़ना रूक जाता है। साथ ही सिर में यदि रूसी है, तो मिट जाती है।

तुलसी में एक प्रकार का उड़नशील तेल होता है। जिसकी खुशबू मच्छर, खटमल एवं सांप इत्यादि सहन नहीं कर पाते, इसी कारण इसका पौधा प्रायः हर घर में लगाया जाता है।

ब्लूरिसी की बीमारी (फेफड़ों में पानी भर जाना एवं सांस रूक-रूककर आना, छाती में दर्द रहना), तुलसी के पत्तों का आधा औंस रस (१५ ग्राम) जो धीरे-धीरे एक औंस (३० ग्राम) तक बढ़ाया जा सकता है। दो बार प्रातः एवं सायं (भूखे पेट) लेने से फायदा होता है।

अर्थराइटिस एवं स्नायु दर्द, साइनस, टांसिल, किडनी के रोग एवं किडनी में पत्थर होना, शरीर में सूजन, अनैच्छिक मूत्र-स्राव, मूत्र नली का सिकुड़ जाना, सफेद कोढ़, ओसटिओपाइलाइटिस, ब्लड कैलेस्ट्राल, हृदय रोग, ब्लडप्रेशर, एसिडिटी, मानसिक दुर्बलता, हिस्टीरिया, लकवा, दमा, ग्लूकोमा आदि आंख की बीमारियां, नपुसंकता, सिफलिस, इओसिनोफिलिया, कैंसर जैसी असाध्य बीमारियों के इलाज में तुलसी बहुत उपयोगी सिद्ध हो रही है।

**तुलसी सेवन का समय एवं अनुपात-** तुलसी के सेवन के लिये भूखे पेट प्रातःकाल का समय उत्तम है। उसके अनुपान में ताजा मीठा दही, गुड़ या शहद का प्रयोग करना चाहिए। तुलसी के ताजे हरे पत्ते १५ से २५ की तादाद में (उम्र के अनुसार) पीसकर अपनी प्रकृति के अनुसार तीनों में से एक अनुपान पर्याप्त मात्रा में लेकर उसमें मिलाकर खा लिया जाये। आधा घंटा तक कोई भी दूसरी वस्तु नहीं खानी चाहिए। चरक के मतानुसार तुलसी कभी दूध के साथ नहीं लेनी चाहिए, क्योंकि इससे त्वचा रोग होने का भय रहता है। यदि तुलसी के पत्ते प्राप्त न हों, तो सूखाकर रखे हुए पत्तों का चूर्ण भी काम में लिया जा सकता है। किन्तु वे हरे पत्तों जितना लाभप्रद नहीं होगा। तुलसी- उपचार के साथ-साथ दो तीन घंटे बाद यदि तुलसी सुधा का भी पान किया जाये, तो यह उत्तम स्वास्थ्यप्रद पेय है।

तुलसी सुधा साधारण बुखार और सर्दी जुकाम की एक अच्छी दवा का भी काम करती है। इसका प्रयोग चाय या कॉफी की जगह भी किया जा सकता है। तुलसी सुधा के उपयोग से चाय, कॉफी, शराब, बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू के व्यसन भी दूर होते हैं।

**तुलसी सुधा बनाने का तरीका-** पीने का पानी एवं गुड़ पर्याप्त मात्रा में लेकर उबालना। चूल्हे से नीचे उतारकर उसमें एक कप पानी के लिए ८ या १० तुलसी के पत्तों के अनुपात में पीसकर उसके साथ ही सोंठ, काली मिर्च, लौंग, दालचीनी, इलायची उचित मात्रा में डालकर ढक दें। ५-७ मिनट के बाद छानकर उसमें स्वाद के अनुसार नींबू निचोड़कर पीजिये। यदि प्रतिदिन चाय या कॉफी की जगह पीना है तो उसमें इलायची का भी प्रयोग करें। जिनको बवासीर की तकलीफ हो, उनको केवल इलायची का ही प्रयोग करना चाहिए।

# आश्रम समाचार

**गीता आश्रम मुख्यालय, दिल्ली कैंट**

परम पूज्य सद्गुरुदेव भगवान की महती कृपा से आश्रम का कार्य सुचारु रूप से प्रगति पथ पर चल रहा है। वासन्तीय नवरात्र पर्व दिनांक ३१ मार्च को आरम्भ हुआ, जिसमें नव दुर्गा मंदिर में कलश स्थापना की गई, जिसमें यजमान भाई सुशील कुमार जी व बहन उषा जी थे। सुबह-शाम माता के मंदिर में पूजा-अर्चना की गई। शाम ४ बजे से सत्संग भजन-कीर्तन किया जाता है। आश्रम की सभी माताओं-बहनों द्वारा यह कार्यक्रम नित्य ९ दिन तक लगातार चलता रहा। अष्टमी तिथि के दिन दिनांक ८ अप्रैल को भगवान मर्यादा पुरुषोत्तम का प्रकाट्य दिवस के उपलक्ष्य में २४ घंटे का अखंड रामायण पाठ किया गया जिसका समापन रामनवमी के दिन सुबह ८.३० बजे किया गया। उसके उपरांत हवन यज्ञ का कार्यक्रम किया गया एवं भजन-कीर्तन सभी भक्तों एवं आश्रमवासियों ने मिलकर बड़े ही धूमधाम से भगवान श्रीराम का प्राकट्य दिवस मनाया। परम पूज्य स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज ने रामनवमी के पावन पर्व पर भगवान श्रीराम के चरित्र एवं गुणों की व्याख्या की। ठीक १२ बजे आरती की गई एवं भक्तों को प्रसाद वितरण किया गया।

दिनांक ६ अप्रैल को गुड़गांव में सत्संग का आयोजन भाई जयदीमन, बहन पिंकी के निवासस्थान पर किया गया, जिसमें आश्रम से पं. अमरनाथ उपाध्याय जी, भाई प्रमोद जी सत्संग में भाग लेने के लिये उपस्थित हुए। गुड़गांव से भी भक्त आये हुए थे। भजन-कीर्तन के उपरांत पं. अमरनाथ जी द्वारा गीता के मंत्रों की व्याख्या की गई। दिनांक १५ अप्रैल को हनुमान जयंती महोत्सव बड़ी ही धूमधाम से मनाया गया। जिसमें सुंदरकांड पाठ, हनुमान चालीसा पाठ, बजरंग बाण, रामस्तुति की गई एवं हनुमान जी के मंदिर को फूल-मालाओं से सजाया गया। १००८ दीपक हनुमान जी के इस पावन पर्व पर पू. स्वामी ब्रह्मानन्द जी, पू. स्वामी श्रेयानन्द जी के सान्निध्य में दीप प्रज्ज्वलित किया गया। तदुपरान्त दोनों स्वामी जी द्वारा हनुमान जी के गुणों की व्याख्या की गई। तदुपरान्त हनुमान जी की आरती की गई एवं भक्तों में प्रसाद वितरण किया गया।

पूज्य गुरु मां जी ने २७ मार्च को स्पेन के लिए प्रस्थान किया। वासन्तीय नवरात्र मौन उन्होंने तनरीफ में किया। गुरु मंदिर, पोरतो मंदिर, गीता आश्रम, सत्यनाम साक्षी मंदिर, पनीदा (आईसीसी) मंदिर, विनियारन मंदिर में गुरु मां जी के नवरात्रों में प्रवचन हुए। दिनांक १० अप्रैल को गुरु मां जी लासपालमास में पधारीं। ११ अप्रैल को सीता मंदिर में भव्य सत्संग समारोह हुआ जिसमें अनेक बच्चों ने अलग-अलग गीता के श्लोकों का उच्चारण किया। अंत में गुरु मां जी ने सब बच्चों को उपहार प्रसाद दिया। लासपालमास से गुरु मां जी का १४ अप्रैल मैडरिड में आगमन हुआ, जहां गीता आश्रम में गीता पाठ करके गुरु मां जी नये गीता आश्रम पधारीं। जहां पर सभी ने मिलकर गीता पाठ, हनुमान चालीसा का पाठ किया। सभी भक्तों ने तन-मन-धन से योगदान दिया। हर कार्य पर सद्गुरुदेव भगवान का भरपूर आशीर्वाद रहा। उन्हीं की कृपा से सारा कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न करके गुरु मां जी दिनांक १५ अप्रैल को हनुमान जयंती के पवित्र पर्व पर दिल्ली पधारीं। सभी भक्तों सहित गुरु मां जी सीधे हनुमन्त सेवा संघ द्वारा आयोजित श्री हनुमन्तलाल जयंती के उपलक्ष्य में आयोजित

जागरण में पधारकर श्री हनुमन्तलाल जी के चरणों में माल्यार्पण किया एवं यज्ञ आहुति दी। गीता आश्रम पहुंचकर सभी भक्तों सहित हनुमान चालीसा का पाठ किया। दिनांक २५ अप्रैल को गुरु मां जी ने यूएसए के लिए प्रस्थान किया।

रविवार सत्संग ११ से १२ बजे तक नियमानुसार चल रहा है। दिनांक ४ मई को गुड़गांव में सत्संग बहन नीरू, भाई प्रदीप मनन के निवासस्थान सेक्टर-९ में होगा।

## गीताधाम समाचार

**नित्य कार्यक्रम-** परम् पूज्य गुरुदेव की कृपा एवं आशीर्वाद से गीताधाम के सभी नित्य कार्यक्रम सुचारु रूप से चल रहे हैं। प्रातः ५.३० बजे शंखनाद से प्रारम्भ होकर भगवान श्रीराधाकृष्ण की मंगला आरती एवं सभी मन्दिरों में आरती-पूजन, गीताजी के द्वादश अध्याय, तीन अन्य अध्याय पाठ, गीता आरती, हनुमान चालीसा एवं माखनमिश्री प्रसाद वितरण होता है। सुबह ६ बजे गुरुकुल विद्या मन्दिर (छात्रावास) के बच्चों द्वारा नित्य द्वादश अध्याय के मंत्रों द्वारा गीता यज्ञ किया जाता है। प्रत्येक सोमवार को श्री हरिहरेश्वर महादेव मन्दिर में पूर्ण विधि विधान सहित रूद्राभिषेक पं. जगदीश वाजपेयी के आचार्यत्व में भक्तों द्वारा नियमित किया जाता है।

संध्या वेला ७.०० बजे से संध्या आरती, सम्पुटवल्ली पाठ, हनुमान चालीसा पाठ, श्लोक का भावार्थ, भजन-कीर्तन एवं शयन आरती एवं प्रसाद वितरण के साथ रात्रि ८.३० बजे सम्पन्न होता है।

**नवरात्र घट स्थापना-** दिनांक ३१ मार्च २०१४ को राधाकृष्ण मन्दिर के परिक्रमा में स्थित मां दुर्गा मन्दिर में चैत्री नवरात्र के प्रथम दिन घट स्थापना विधि-विधान से की गई तथा देवी स्तुति एवं देवी महिमा के भजन-कीर्तन किये गये। यह कार्यक्रम आठों दिन किये गये।

**घट विसर्जन-** दिनांक ८ अप्रैल २०१४ को विधि-विधान से घट का विसर्जन धाम के समीप से बह रही इन्दिरा गांधी नहर में किया गया।

**रामनवमी महोत्सव-** दिनांक ८ अप्रैल २०१४ को ही प्रातः राम नवमी का महोत्सव धूमधाम से मनाया गया। श्रीराम परिवार की पूजन आरती की गई एवं बाद में राधाकृष्ण मन्दिर में भक्तों द्वारा राम महिमा के भजन प्रस्तुत किये गये। धाम में उपस्थित सभी लोगों ने एवं जोधपुर व तिवंरी से आये भक्तों ने जय-जयकार की व प्रसाद पाया। तत्पश्चात् भोजनशाला में सामूहिक रूप से भोजन प्रसादी का आनन्द लिया।

**श्री संकट हरण हनुमान जी को १००८ लड्डुओं का भोग-** दिनांक १५ अप्रैल २०१४ को प्रत्येक पूर्णिमा की भांति इस पूर्णिमा को धाम में स्थित श्री संकट हरण हनुमान जी के मन्दिर में हनुमान जी को १००८ लड्डुओं का भोग, हनुमान चालीसा की पांच आवृतियों के साथ लगाया गया। हनुमान जी की आरती के बाद जयघोष किया गया। जिसके प्रायोजक कुमारी रसीका मनु पुत्री श्री रमन कुमार टोगनाटा निवासी पूना रहे। जिसमें मुख्य यजमान श्री केशवराज जोशी व उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सुन्दरकौर रहे। सह-यजमान में प्रशासक श्री प्रकाश जी पुरोहित एवं श्री दाउलाल जी बोडा रहे। गुरुकुल के शिक्षक व सभी छात्रों ने हनुमान चालीसा का सामूहिक रूप से पाठ किया। सभी भक्तों ने अन्त में प्रसाद पाया।

**भोजनशाला हेतु सब्जी का उत्पादन-** सब्जियों के भाव बाजार में अत्यधिक बढ़ जाने की वजह से बढ़ते हुए खर्च को कम करने लिये धाम परिसर में ही करीब ढाई हैक्टेयर भूमि पर सब्जियां उगाई गई हैं तथा साथ ही पानी की व्यवस्था की गई है। कम पानी से अधिक

पैदावार हो इसके लिये ड्रिप सिस्टम लगाया गया है। आशा है इससे धाम के खर्च में कमी आयेगी व ताजी सब्जियां भी स्कूली छात्रों एवं स्टॉफ को मिल पायेंगी। फिलहाल सीजन के अनुसार सब्जियों में लौकी, भिण्डी, तरककड़ी, तोरी, पुदीना, ग्वारफली आदि बोये गये हैं।

### गीता आश्रम, फरीदाबाद

परम पूज्य गुरुदेव भगवान की असीम अनुकम्पा से यहां का सम्पूर्ण कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। आश्रम में भोजनालय-हाल का निर्माण कार्य चल रहा है।

दिनांक २६.३.१४ को पूज्य गुरुदेव भगवान की पुण्य-तिथि के अवसर पर यहां से भक्तों की एक बस भरकर दिल्ली पहुंची। वहां पूज्य स्वामी मुक्तानन्द जी व स्वामी गीता मातेश्वरी जी के साथ सभी भक्तों ने पूज्य गुरुदेव के पावन चरणों में पुष्पांजलि समर्पित की।

तत्पश्चात वहीं से पू. स्वामी जी एवं मातेश्वरी जी ने पंजाब के लिए प्रस्थान किया। भवानीगढ़, संगरूर, चंडीगढ़ व पंचकूला में भक्तों के घर पर गीता-पाठ, सत्संग व गीता जी का हवन किया। दिनांक २९.३.१४ को वापिस पधारे।

नवरात्रि का पर्व दोनों आश्रमों में पूर्ववत् मनाया गया। गीता आश्रम नं. ५ में प्रातः ८.००-९.०० बजे तक गीता-पाठ व दुर्गा-चालीसा के पाठ किये गये व गीता आश्रम नं. २ में सायंकाल ४.००-६.०० बजे तक द्वादश अध्याय के १०८ पाठ तुलसीदल के साथ किये गये। यह नियम गत ३५-४० वर्षों से चल रहा है। कुटिया बनने से पूर्व यह कार्यक्रम घर-घर में होता था। दुर्गा-अष्टमी व राम नवमी का पर्व गीता-यज्ञ करके हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। दिनांक ९.४.१४ को पू. स्वामी जी व मातेश्वरी जी ने जालन्धर (पंजाब) के लिए प्रस्थान किया। वहां भक्तों के घर पर गीता-पाठ व सत्संग करके दिनांक १२.४.१४ को अमृतसर पधारे। हर वर्ष की भांति इस बार भी वहां दिनांक १३.४.१४ से २०.४.१४ तक गीता-सप्ताह धूमधाम से सम्पन्न हुआ। वहां की कार्यकारिणी सभा बहुत ही सुंदर ढंग से गीता-प्रचार में लगी हुई है। दिनांक २३.४.१४ को पू. स्वामी जी व मातेश्वरी जी फरीदाबाद वापिस पधार गये।

## शोक समाचार

अत्यंत दुःख के साथ सूचित किया जाता है कि महाराज श्री के अनन्य दीक्षित शिष्य श्री रामशरण बंसल जी का ६५ वर्ष की अवस्था में दिनांक १०.४.२०१४ को जयपुर में आकस्मिक निधन हो गया है। आपका जन्म दिनांक २२.१२.१९४८ को हुआ था। आप तन-मन-धन से गुरु, गीता, गोपाल की सेवा में समर्पित थे।

समस्त गीता परिवार की श्रीकृष्ण भगवान से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को अपने श्रीचरणों में निवास दें एवं उनके शोक संतप्त परिवार को इस असह्य दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

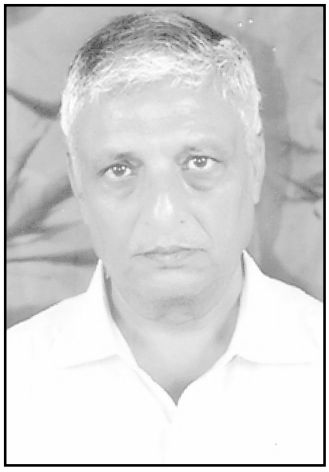

**श्री रामशरण बंसल**

# राशिफल : 14 मई से 14 जून 2014 तक

**मेष चू, चे, चो, ल, ली, लू, ले, लो, अ**
स्वास्थ्य कमजोर रहेगा, आय-व्यय बराबर रहेगा, शुभ यात्रा का योग है, सहयोगियों का सहयोग मिलेगा, जीवन साथी का स्वास्थ्य चिंताजनक रहेगा।

**वृष ई, ऊ, ए, ओ, बा, बी, बु, बे, बो**
स्वास्थ्य उत्तम रहेगा, आर्थिक दृष्टि से समय उत्तम रहेगा, विरोधियों पर विजय मिलेगी, जीवन साथी का स्वास्थ्य चिंताजनक रहेगा, संतान के कारण चिंता हो सकती है।

**मिथुन क, की, कु, घ, ड़, छ, के, को, ह**
स्वास्थ्य अच्छा रहेगा, आर्थिक दृष्टि से समय कमजोर रहेगा, विरोधियों से सावधान रहें, सन्तान की उन्नति होगी, समय बहुत उत्तम रहेगा, इस समय का सदुपयोग करें।

**कर्क ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, डो**
स्वास्थ्य मध्यम रहेगा, संतान के विषय में चिंता रह सकती है, शुभ कार्यों में धन का व्यय होगा, किसी शुभ स्थान की यात्रा होगी, वाहन का सुख हो सकता है।

**सिंह मा, मी, मू, मे, मो, ट, टी, टू, टे**
स्वास्थ्य उत्तम रहेगा, स्थिर सम्पत्ति का लाभ हो सकता है, क्रोध में वृद्धि हो सकती है, गुप्त शत्रु से सावधान रहें, लाभप्रद योजनाएं बनेंगी।

**कन्या टो, प, पी, पू, ष, ण, ठ, पे, पो**
स्वास्थ्य थोड़ा कमजोर रहेगा, आर्थिक दृष्टि से भी समय कमजोर है, राजपक्ष से परेशानी हो सकती है, जीवन साथी तथा बंधु वर्ग से सहयोग बना रहेगा।

**तुला रा, री, रु, रे, रो, ह, त, ती, तू, ते**
स्वास्थ्य मध्यम रहेगा, जीवन साथी से अनबन रह सकती है, आय-व्यय अधिक रहेगा, शनि राहु का दान करें।

**वृश्चिक तो, ना, नी, नू, ने, या, यी, यू**
स्वास्थ्य मध्यम रहेगा, संतान पक्ष से खुशी मिलगी, भाई-बन्धुओं से सहयोग मिलेगा, किसी गुप्त स्रोत से धन मिल सकता है।

**धनु ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढ, भे**
स्वास्थ्य उत्तम रहेगा, वाहन-मकान आदि का लाभ हो सकता है, आय के साधन उपलब्ध रहेंगे, संतान उन्नति करेगी।

**मकर भो, ज, जी, जे, खी, खू, ग, गी**
माता-पिता का स्वास्थ्य चिंताकारक हो सकता है, जीवन साथी से सहयोग मिलेगा, कार्य क्षेत्र में विघ्न आने के बावजूद आप सफल रहेंगे, संतान से खुशी मिलेगी।

**कुम्भ गु, गे, गो, सा, सी, सू, से, सो, दा**
समय भाग्योदयकारक है, संतान पक्ष से खुशी मिलेगी, जीवन साथी का स्वास्थ्य उत्तम रहेगा, मनोबल प्रबल रहेगा।

**मीन दी, दू, थ, झ, दे, दो, चा, ची**
भाई बन्धुओं से खुशी मिलेगी, स्वास्थ्य उत्तम रहेगा, उदार विकार हो सकता है, मांसाहार से दूर रहें, कार्यक्षेत्र में समय उत्तम रहेगा।


## ज्योतिर्विद- सत्यपाल शर्मा

एम.एस.सी. ( फिजिक्स ) ज्योतिर्विज्ञान केन्द्र

**Mobile : 09560089575 ● e-mail : daivagya@hotmail.com**

# व्रत/त्योहार सूची

## 14 मई 2014 से 14 जून 2014

### उत्तर गोल/उत्तराणायन/गीष्म ऋतु

| क्र.स. | व्रत/पर्व | दिनांक | वार |
|---|---|---|---|
| १. | श्री कूर्म-जयंती, श्री बुद्ध जयंती, बुद्ध पूर्णिमा, बैशाखी पूर्णिमा, बैशाख स्नान समाप्त | १४-०५-२०१४ | बुधवार |
| २. | श्री गणेश चतुर्थी व्रत (ज्येष्ठ) | १७-०५-२०१४ | शनिवार |
| ३. | मासिक कालाष्टमी व्रत (ज्येष्ठ) | २१-०५-२०१४ | बुधवार |
| ४. | ज्येष्ठ कृष्ण एकादशी व्रत, भद्रकाली एकादशी | २४-०५-२०१४ | शनिवार |
| ५. | ज्येष्ठ कृष्ण सोम प्रदोष व्रत | २६-०५-२०१४ | सोमवार |
| ६. | ज्येष्ठ मासिक शिवरात्रि व्रत | २७-०५-२०१४ | मंगलवार |
| ७. | भावुका अमावस, वट सावित्री व्रत | २८-०५-२०१४ | बुधवार |
| ८. | रम्भा तृतीया | ३१-०५-२०१४ | शनिवार |
| ९. | श्री सिद्धिविनायक चतुर्थी व्रत | १-०६-२०१४ | रविवार |
| १०. | अरण्य षष्ठी, विन्ध्यवासिनी पूजा | ४-०६-२०१४ | बुधवार |
| ११. | मासिक दुर्गाष्टमी व्रत (ज्येष्ठ) | ६-०६-२०१४ | शुक्रवार |
| १२. | श्री गंगा दशहरा | ८-०६-२०१४ | रविवार |
| १३. | ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी व्रत, निर्जला एकादशी | ९-०६-२०१४ | सोमवार |
| १४. | ज्येष्ठ शुक्ल प्रदोष व्रत (भौम) | १०-०६-२०१४ | मंगलवार |
| १५. | ज्येष्ठ शुक्ल पूर्णिता व्रत | १२-०६-२०१४ | गुरुवार |
| १६. | वट सावित्री व्रत (पूर्णिमा व्रत) | १२-०६-२०१४ | गुरुवार |

पंचक प्रारम्भ : बुधवार, २१-०५-२०१४

पंचक समाप्त : रविवार, २५-०५-२०१४

निदेशक :

**पं. गौरीदत्त शर्मा ज्योतिर्विद (गीता रत्न)**

(श्रीमद्भागवत आदि पौराणिक कथावाचक)

ज्योतिष विज्ञान केन्द्र, गीता आश्रम, सदर बाजार, दिल्ली कैन्ट, दिल्ली-110010

फोन नं. 011-25683558, मोबाइल 09418551441

e-mail : daivagya@gmail.com

# मेकिन उरानन स्कालरशिप फंड

## गीता आश्रम, थाईलैंड, बैंकाक

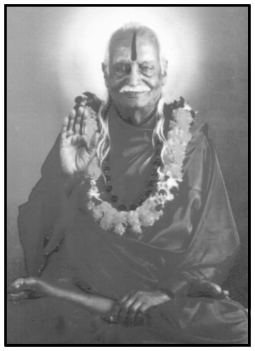

यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्॥

यज्ञ, दान और तपरूप कर्म त्याग करने के योग्य नहीं, बल्कि वह तो अवश्य कर्तव्य हैं; क्योंकि यज्ञ, दान और तप, ये तीनों ही कर्म बुद्धिमान् पुरुषों को पवित्र करने वाले हैं।

( गीता-18/5 )

'मेकिन उरानन स्कालरशिप फंड' की स्थापना परम पूज्य परमहंस स्वामी श्री हरिहर जी महाराज द्वारा 1989 में बैंकाक में निर्धन किंतु प्रतिभाशाली छात्रों को नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा में सहायता प्रदान करने हेतु की गई थी। श्रीमती मेकिन उरानन, उनका परिवार, महाराज जी तथा सहेली फाउंडेशन, श्री जयकुमार मीरपुरी, श्री हासाराम एस. तनवानी, कृष्णा एशियन आर्ट्स कं. और अन्य अनेक लोग इस फंड की पूंजी को बढ़ाने के लिए तत्पर रहे हैं।

फंड की व्यवस्था की देखभाल गीता आश्रम थाईलैंड की 'मेकिन उरानन छात्रवृत्ति कमेटी' करती है। उस कमेटी के सदस्य हैं-

**Dr. Chirapat Prapanvidya (Silpakorn University), Dr. Samniang Leurmsai (Silpakorn University), Dr. Prapod Assavarirulhakarn (Chulalongkorn University), Miss Vilai Ueranant, Dr. M.C. Agarwal (Former Senior Officer of the United Nations), Mr. Somsakdi Tantiwathin (Former President of Rotary Club of Bangkapi and Former President of India-Thai Chamber of Commerce) and Mr. C. Hotwani (Treasurer, Geeta Ashram, Thailand).**

निर्धन और प्रतिभाशाली छात्रों की शिक्षा-प्राप्ति में सहायता करना एक सर्वोत्तम पुण्य कार्य है। शायद इस सहायता के बिना उनके लिए शिक्षा-प्राप्ति अत्यन्त कठिन होती। योग्य छात्र अधिकाधिक संख्या में आर्थिक सहायत प्राप्त कर सकें इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए 'मेकिन उरानन स्कालरशिप फंड' दानी महानुभावों से अधिकाधिक दान देने का अनुरोध करता है।